राजस्थान सरकार

उन्नत पशु पालन एवं प्रबन्धन

पशुपालन विभाग, राजस्थान

उन्नत पशुपालन
एवं प्रबन्धन

निदेशक, पशुपालन विभाग
राजस्थान, जयपुर

प्रकाशक :

पशुपालन विभाग, राजस्थान

पशुधन भवन, टोंक रोड़, जयपुर–302015

फोन न. : 0141–2743492, 2742243, 2742984

फैक्स न. : 0141–2743267

Website : www.animalhusbandry.rajasthan.gov.in

अनुक्रमणिका

पशुआहर एवं प्रबन्धन

- कृषि में पशुपालन का महत्व 01
- दूध उत्पादन कैसे बढ़ाये 02
- पशुओं की आवास व्यवस्था 03
- पशुओं की दिनचर्या व देखभाल 05
- संतुलित पशु आहार 07
- यूरिया से चारे को उपचारित कर पौष्टिक बनाना 09
- बांट अथवा दाने में आहार अवयवों की आवश्यक मात्रा 10

पशुपालन

- बकरी पालन 11
- भेड़ स्वास्थ्य एवं प्रबन्धन 15
- ऊंट पालन 16
- कुक्कुट पालन 21
- पशु नस्ल सुधार का आधार है बधियाकरण 26
- पशु का बीमा कराया जाना लाभकारी 26
- पॉलीथीन : पशुओं के लिए जानलेवा 27

पशुप्रजनन

- पशु के ताव में आने के लक्षण 28
- कृत्रिम गर्भाधान 28
- प्राकृतिक परिसेवा 29
- मादा पशु के ताव में ना आने के कारण व निवारण 30
- गाय-भैंसों को बार-बार ग्याभन कराने के बाद भी ना रुकना 31
- पशुओं में प्रजनन सम्बन्धी रोग 32
- गर्भित पशुओं की देखभाल 33
- ब्याने के समय रखी जाने वाली सावधानियां 33
- स्वच्छ दुग्ध उत्पादन 34

पशुस्वास्थ्य

- रोगी पशुओं के सामान्य लक्षण 37
- संक्रामक रोग से मृत पशु के शव का निस्तारण 37
- पशुओं में होने वाले प्रमुख संक्रामक रोग 38
- पशुओं के परजीवी रोग व बचाव 39
- पशुओं को थनैला रोग से बचाएं 40
- पेट सम्बन्धी सामान्य रोग एवं उपचार 41
- दुग्ध ज्वर 42
- शल्य चिकित्सा द्वारा ठीक किए जाने वाली प्रमुख व्याधियां 44

पशुपालन का महत्व

- हमारे प्रदेश की जलवायु, आर्थिक स्थिति के मद्देनजर, मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया है, जिसमें कषि के साथ–साथ पशुपालन को अपनाया गया है।
- कृषि व पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में एक दूसरे के पूरक सिद्ध हुए हैं । यहां तक की कृषि में पशु की महत्ता को माना गया है।
- बैल, भैंस, ऊंट व घोड़े का उपयोग खेत की जुताई, बिजाई, जमीन पाटना, अनाज पृथक करना जैसे कृषि कार्य में किया जाता है। कृषि उत्पादों, खाद व दूध को लाना ले जाना व आवागमन के साधन के रूप में पशुओं का उपयोग किया जाता है।
- गोबर, मूत्र व मिंगनी का उपयोग भूमि को अधिक उपजाऊ बनाने के हेतु खाद के रूप में उपयोग में किया जाता है।
- पशुओं के गोबर द्वारा गोबर गैस का उत्पादन किया जाता है, जिसका उपयोग ईंधन, प्रकाश के रूप में तथा बचे हुये पदार्थ को खाद के रूप में काम में लिया जाता है।
- दुधारू पशुओं द्वारा दूध, भेड़, बकरी, ऊंट आदि के ऊन व बाल गर्म कपड़े, कालीन, रस्से व विभिन्न प्रकार की सामग्रियां बनाने हेतु काम में आते हैं।
- मृत पशुओं की खालें, चर्म उद्योग में व हड्डियों का उपयोग औषधियों व कास्मेटिक सामान बनाने में उपयोग किया जाता हैं।
- मुर्गी फार्म द्वारा कृषक, मांस वाली व अण्डे वाली प्रजातियों का पालन कर आय का अच्छा स्रोत बना सकता है।
- शूकर पालन द्वारा कृषक, मांस, चर्म व बालों से मुनाफा कमा सकते हैं।

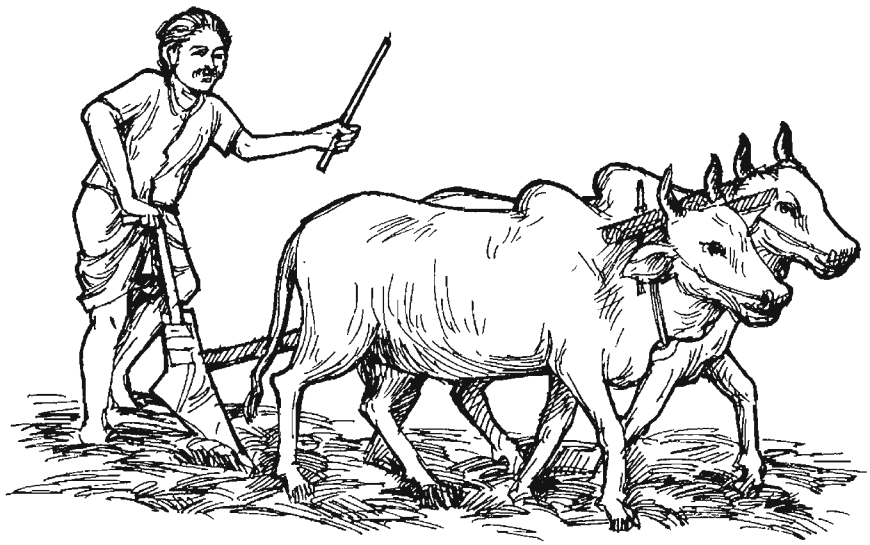

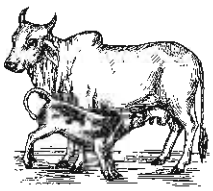

दूध उत्पादन कैसे बढ़ायें

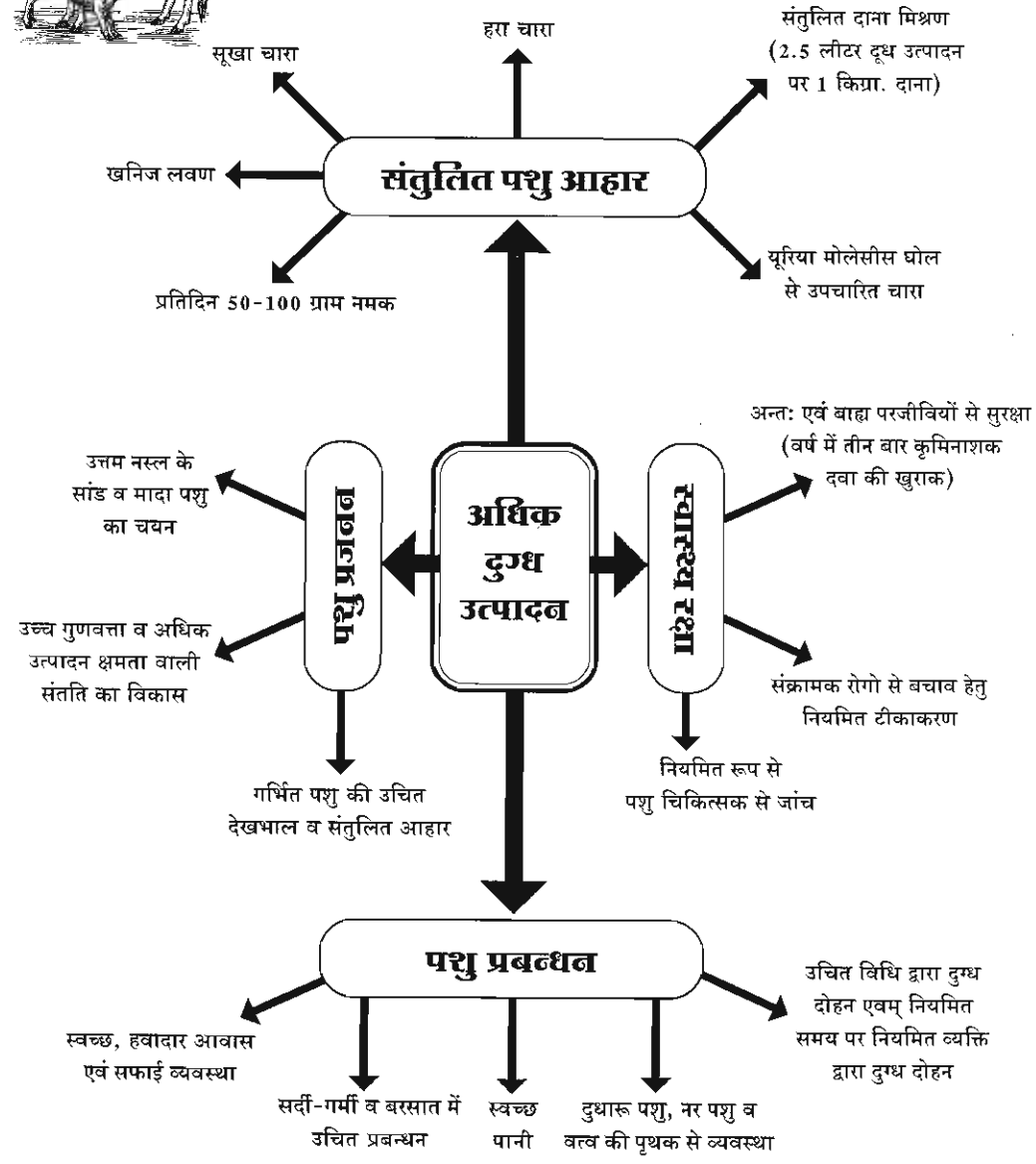

पशुओं की आवास व्यवस्था

पशुओं का आवास कैसा हो –

- पशु बाड़ा रिहायशी मकानों वाले स्थान से पृथक एवं दूर हो।
- बाड़ा ऊंचे स्थान पर हो ताकि वर्षा का जल एकत्रित न हो।
- वहां तक आवागमन का मार्ग हो।
- पानी व बिजली की समुचित व्यवस्था हो।
- पशु बाड़े में सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में आता हो।
- बाड़े में शुद्ध हवा का प्रवाह रहता हो।
- पशु बाड़े की दीवारें ऊंची व सुरक्षित हो।
- पशु बाड़े का वातावरण शांत व आरामदेह हो।
- गर्मी, सर्दी व वर्षा ऋतुओं में पशुओं के लिए अनुकूल हो।
- पशुपालक के आर्थिक स्तर वाला एवं कम खर्चीला हो।

पशु आवास को स्वच्छ एवं पशु के लिए आरामदायक कैसे रखें –

- बाड़े में मल–मूत्र बहने के लिए नाले होने चाहिए। समय–समय पर उनके द्वारा परित्याग किये गये मल–मूत्र को हटाते रहना चाहिए।
- यथा संभव ढलानयुक्त पक्का फर्श होना चाहिए ताकि बाड़े में गीलापन न रहे। इसे आरामदायक बनाने के लिए घास–फूसं की बिछावन डाली जा सकती हैं।

- पशु आवास में मच्छर मक्खियों को दूर रखने के लिए धुआं किया जा सकता है अथवा डी.डी.टी. या बी.एच.सी. पाऊडर का छिड़काव किया जाना चाहिए।
- पशु आवास की नित्य फिनाइल के पानी से धुलाई करनी चाहिए।
- पशु आवास के आस-पास पर्याप्त मात्रा में छायादार वृक्ष होने चाहिए तथा पानी व बिजली की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- गर्मी के मौसम में दुधारू पशुओं को नहलाने से उत्पादन बढ़ता है तथा शरीर के बाहरी भागों पर रहने वाले परजीवी भी नष्ट होते हैं।
- भेड़-बकरियों व अन्य पशुओं के शरीर पर पनपने वाले बाह्य परजीवियों को नष्ट करने हेतु दवा के घोल युक्त पानी में नहलाना चाहिए।
- पशु आवास में बछड़े-बछड़ी, सांड, दुधारू गायें, सूखी गायें व गर्भित गायों के आवास की अलग-अलग व्यवस्था होनी चाहिए।
- पशु आवास के लिए चुना गया स्थान पर्याप्त मात्रा में खुला हो ताकि पशु घूम-फिर सकें।

पशु आवास में सफाई महत्व

- पशु आवास में सफाई रखने से आवास सुन्दर दिखता है।
- आवास में परजीवी कीट जैसे मच्छर, मक्खी, चींचड़, जुएं आदि नहीं पनपती।
- स्वच्छ आवास में विभिन्न प्रकार के जीवाणु एवं विषाणु नहीं पनपते, अतः पशु निरोगी रहते हैं।
- स्वच्छ आवास में पशु भी प्रसन्नचित्त रहते हैं फलस्वरूप उनका उत्पादन बढ़ता है तथा सही विकास होता है।

पशुओं की दिनचर्या व देखभाल

दिनचर्या निश्चित करने से लाभ

- पशु को चारा–पानी दिन में तीन बार देना चाहिए। सर्वप्रथम सुबह, दोपहर व सायंकाल सोने जाने से पूर्व। इस प्रकार की दिनचर्या से पशु को खाये हुए चारे को जुगाली कर सुपचनीय बनाने में पर्याप्त समय मिल जाता है।
- सुबह तथा शाम को चारे पानी का समय दूध निकालने से पहले निश्चित कर लेना चाहिए जिससे पशु तृप्त रहे। इससे पशु प्रयाप्त मात्रा में प्रसन्न चित्त होकर दूध देते हैं।
- समय से चारा–पानी देने से पशु का पाचन तंत्र सही रहता है। फलस्वरूप कमजोरी, कब्ज, पतले दस्त, अपच, कम उत्पादन जैसी बीमारियां नहीं होती।
- चारे–पानी के अलावा पशुशाला की सफाई, दूध दुहना इत्यादि कार्य भी निश्चित समय पर ही करने चाहिए जिससे पशुओं को असमय असुविधा न हो।
- पशुओं को पीने के लिए स्वच्छ जल की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए।
- पशुओं को चारे के पश्चात् भरपेट पानी पिलाना चाहिए। पशुओं को गर्मी के मौसम में पानी की अधिक आवश्यकता होती है। अतः पानी की व्यवस्था प्रयाप्त होने पर पशु समय–समय पर इच्छानुसार पानी पी सकता है।

नवजात बछड़े/बछड़ियों की देखभाल

डेयरी व्यवसाय की सफलता नवजात बछड़े/बछड़ियों की देखभाल पर अत्यन्त निर्भर है। इससे सम्बन्धित मुख्य बातें बिन्दुवार निम्नानुसार है।

1. नवजात बछड़े–बछड़ी के जन्म के तुरन्त बाद रखी जाने वाली सावधानियां :

(i) नवजात बछड़ा जन्म के समय एक लेसदार पदार्थ के कारण चिपचिपा होता है जिसे गाये स्वतः चाटकर साफ कर देती हैं।

(ii) यदि जन्म के तुरंत बाद बछड़े को मां से अलग रखना हो तो सूखी घास या साफ बोरी के टुकड़ों से नाक, कान एवं मुंह तुरन्त साफ कर दें।

(iii) बछड़े को सांस लेने में कठिनाई हो तो उसकी जीभ को थोड़ा सा बाहर खींचकर तथा सीने को थोड़ा रुक–रुककर दबाकर कृत्रिम सांस दिलाएं।

(iv) बछड़े मां से एक नाल द्वारा जुड़े रहते हैं जो जन्म के समय टूट जाती है यदि ऐसा न हो तो नाभि से 2–4 इंच की दूरी से इसे काटकर गांठ लगाकर इस पर टिंचर आयोडीन का फोहा लगा देना चाहिए।

(v) जन्म के 1 घंटे के अन्दर ही नवजात को अपनी मां द्वारा दिया गया पहला तरल चीका या खीस तुरंत पिलाना चाहिए। यइ अत्यन्त पौष्टिक, शीघ्र पाचक एवं विटामिन 'ए', बी व रोग प्रतिरोधी तत्वों से भरपूर होने के कारण बछड़े को रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करता है।

2. नवजात बछड़े/बछड़ियों की आवास व्यवस्था :

(i) नवजात बछड़े/बछिड़यों को स्वच्छ, शुद्ध हवादार कमरे में सूखी बिछावन पर रखना चाहिए।

(ii) शीत ऋतु में कमरा गर्म एवं ग्रीष्म ऋतु में ठंडा रखना चाहिए।

(iii) एक बछड़े के लिए लगभग 2–3 वर्गमीटर स्थान उपलब्ध होना चाहिए।

(iv) ठंड के मौसम में गेहूं/धान का भूसा या सूखी पत्तियों की बिछावन होनी चाहिए।

(a) संक्रामक बीमारियां फैलने की संभावना कम हो जाती है।

(b) चाटने से होने वाली नाभि सम्बन्धी बीमारी की संभावना समाप्त हो जाती है।

(c) बछड़ों को अलग–अलग दूध पिलाना आसान हो जाता हैं

(d) रोगी बछड़ों को आसानी से पहचाना एवं अलग किया जा सकता है।

3. बछड़ों को सींग रहित करना :

(i) 1–2 सप्ताह की उम्र पर सींग रहित कर देना चाहिए।

(ii) बछड़ों के सींग निकालने हेतु कास्टिक पोटाश छड़ या विद्युतीय छड़ का प्रयोग करना चाहिए।

4. नवजात बछड़े/बछड़ियों की पहचान के लिए चिन्ह बनाना।

(i) पशुओं के रिकॉर्ड, बीमा या रजिस्ट्रेशन के लिए पहचान चिन्ह बनाये जाते हैं।

(ii) गोदना या टैग लगाना बछड़ों की पहचान के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं।

(iii) बड़े बछड़ों के बांए कान के अन्दर इच्छित नम्बर गोदा जाता है।

(iv) छोटे बछड़ों के कान में बने बनाये नम्बर अंकित टैग कान छेदने की मशीन से लगाए जाते हैं।

5. बछड़े–बछड़ियों को कृमिनाशक औषधियां देना :

(i) बछड़े–बछड़ियों के पाचन तंत्र में कृमियों के मौजूद होने से अच्छे खान–पान के उपरान्त भी बछड़े–बछड़ियों की उचित वृद्धि नहीं होती।

(ii) बछड़े–बछड़ियों को समय–समय पर कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए।

6. बछड़े–बछड़ियों का टीकाकरण :

(i) संक्रामक रोगों से बचाव हेतु बछड़े–बछड़ियों का टीकाकारण अत्यन्त आवश्यक है।

संतुलित पशु आहार

संतुलित आहार, चारे अथवा चारे–दाने का ऐसा मिश्रण होता है, जिसमें पशु को स्वस्थ्य रखने, वृद्धि, उत्पादन कार्य के लिए आवश्यकतानुसार विभिन्न पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, मिनरल एवं विटामिन आदि एक निश्चित मात्रा एवं अनुपात में उपलब्ध होते हैं।

संतुलित आहार में निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिए।

- यह स्वादिष्ट एवं सुपाच्य हो।
- यह विषैला, सड़ा–गला, दुर्गन्ध युक्त न हो व अखाद्य पदार्थों से मुक्त हो।
- इसे खिलाने से दूध में अवांछित गंध नहीं आनी चाहिए।
- संतुलित आहार में आसानी से उपलब्ध स्थानीय आहार अवयवों का प्रयोग करना चाहिए ताकि यह सस्ता भी हो।

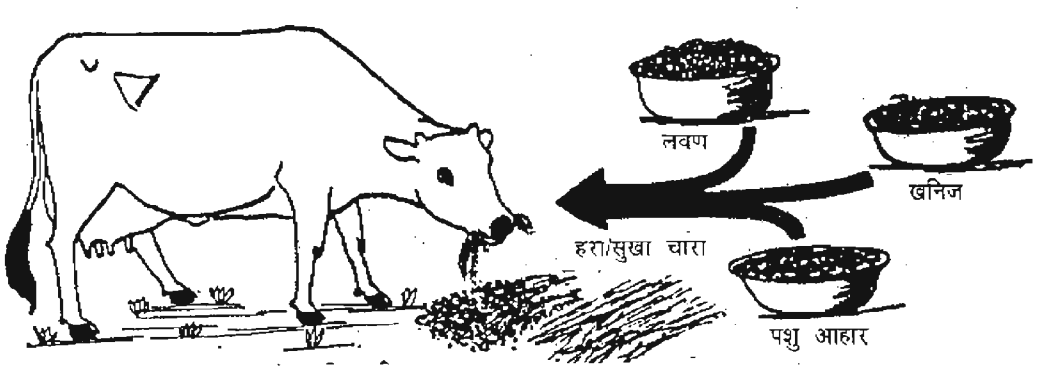

संतुलित आहार पशुओं को नहीं खिलाने पर :

- बछड़े–बछड़ियों की वृद्धि दर कम हो जायेगी जिससे वे अधिक उम्र में सांड व गाय बनेंगे।
- खेती व भार ढोने वाले पशुओं की कार्यक्षमता कम हो जायेगी।
- संतुलित आहार के अभाव में पशुओं में कमजोरी आने से उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती हैं।
- सांडों में उत्तेजना कम व शुक्राणुओं में निष्क्रियता होने की संभावना रहेगी।
- गाय समय पर ताव में नहीं आयेगी, गर्भधारण नहीं करेगी या अधिक उम्र में गर्भधारण करेगी।
- गर्भधारण करने पर बच्चा अस्वस्थ एवं कमजोर होगा यहां तक कि गर्भपात भी हो जाता है।
- उपरोक्त कारणों से उत्पादकता में कमी के साथ नस्ल भी खराब होगी।

विभिन्न पशुओं के लिए आहार की मात्रा

क्र.सं.	पशु प्रकार	पशु अवस्था	सूखा चारा	हरा चारा	सान्द्र आहार(दाना)	खनिज लवण मिश्रण
1.	सांड	2-2.5 वर्ष	8-10 किग्रा	5 किग्रा	2-2.5 किग्रा	15 ग्राम
2.	सांड	2.5 वर्ष से अधिक	8-10 किग्रा	5 किग्रा	3 किग्रा	20 ग्राम
3.	गाय	शुष्क	7 किग्रा	-	1 किग्रा	20 ग्राम
4.	गाय	ग्याभिन (6 माह से ऊपर)	7 किग्रा	5-6 किग्रा	2 किग्रा	40 ग्राम
5.	गाय	दुधारू (5 लीटर दूध प्रतिदिन)	7 किग्रा	10 किग्रा	3 किग्रा	50 ग्राम
6.	भैंस सांड	2-2.5 वर्ष	8-10 किग्रा	5 किग्रा	2-2.5 किग्रा	15 ग्राम
7.	भैंस सांड	2.5 वर्ष से अधिक	8-10 किग्रा	5 किग्रा	3 किग्रा	20 ग्राम
8.	मादा भैंस	शुष्क	8 किग्रा	-	1-1.5 किग्रा	20 ग्राम
9.	मादा भैंस	ग्याभिन (6 माह से ऊपर)	8 किग्रा	5-10 किग्रा	2.5 किग्रा	50 ग्राम
10.	मादा भैंस	दुधारू (5 लीटर दूध प्रतिदिन तक)	8 किग्रा	10 किग्रा	3-4 किग्रा	50 ग्राम
11.	बकरा	प्रजनन योग्य	11/2 किग्रा	2 किग्रा	1/2 किग्रा	10 ग्राम
12.	बकरी	शुष्क	1 किग्रा	1 किग्रा	200 किग्रा	10 ग्राम
13.	बकरी	ग्याभिन	1 किग्रा	1 किग्रा	300 किग्रा	10 ग्राम
14.	बकरी	दूध देने वाली	11/2 किग्रा	2 किग्रा	400 किग्रा	10 ग्राम
15.	ऊंट	भारी कार्य	12-14 किग्रा	10-15 किग्रा	3 किग्रा	30 ग्राम
16.	ऊंट	मध्यम कार्य	11-12 किग्रा	8-10 किग्रा	2-2.5 किग्रा	30 ग्राम
17.	ऊंट	हल्का	10-11 किग्रा	8-10 किग्रा	1.5 - 2 किग्रा	30 ग्राम

नोट : 5 लीटर से अधिक दुग्ध उत्पादन होने पर गायों में प्रति 2.5 लीटर एवं भैंसों में प्रति 2 लीटर दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाने की मात्रा बढ़ा दें।

यूरिया से चारे को उपचारित कर पौष्टिक बनाना

चारागाह की कमी की स्थिति में पशुओं के लिए पोष्टिक चारा उपलब्ध होना मुश्किल हो गया है। साथ ही खाद्यान्नों के महंगे होने से पर्याप्त मात्रा में दाना भी पशुओं को उपलब्ध नहीं हो पाता है। इस कारण से पशुओं की उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता में भी कमी होने लगी है।

इस समस्या के समाधान हेतु सूखे चारे, भूसे या तुड़ी को यूरिया खाद से एक निश्चित अनुपात एवं विधि से उपचारित कर पशुओं को खिलाने पर प्रोटीन की कमी को पूरा किया जा सकता है।

गाय व भैंस (जुगाली करने वाले पशु) के पाचन तंत्र में पाये जाने वाले लाभदायक जीवाणु (माइक्रो फ्लोरा), यूरिया खाद के नाइट्रोजन भाग का उपयोग कर इसे प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं। इस तरह से पशु को प्राप्त प्रोटीन, उसकी उत्पादकता एवं शारीरिक वृद्धि में बहुत लाभकारी होता है एवं दाने व बांट की कमी को पूरा करता है।

यूरिया–मोलासेस मिश्रण को बनाने एवं खिलाने की विधि :

- 1.5 किग्रा. यूरिया खाद को 2 लीटर पानी में अच्छी तरह घोलें।
- इस घोल को 10 किग्रा. गुड़ की लपटी में मिलायें।
- इसमें 1 किग्रा नमक व 1 किग्रा. मिनरल मिश्रण मिलायें।
- उक्त घोल को अच्छी तरह मिलाकर बड़े घड़े या प्लास्टिक के बर्तन में सुरक्षित रख लें।
- इस यूरिया मोलासेस मिश्रण की 250 ग्राम मात्रा को 2 लीटर पानी में घोलकर सूखे चारे, तुड़ी, कुड़बी या खाखला आदि पर छिड़कें। सूखा चारा आदि को थोड़ी देर भिगने के पश्चात् खिलायें।
- इस यूरिया मोलासेस मिश्रण की मात्रा एक व्यस्क पशु को 250 ग्राम से प्रारम्भ कर अधिकतम 500 ग्राम तक खिलावे।
- उपचारित चारे आप के देख–रेख में खिलावे । चार माह से कम आयु वाले जुगाली करने वाले पशुओं को यूरिया उपचारित चारा नहीं खिलावें, छोटे पशुओं को यह चारा खिलाये जाने पर यूरिया विषाक्तता हो सकती है।

सावधान

1. यूरिया–मोलासेस मिश्रण की मात्रा व्यस्क पशु (गाय व भैंस) को 500 ग्राम से अधिक किसी भी स्थिति में ना खिलावें।
2. चार माह से छोटे पशु (बछड़े–बछड़ियां एवं पाडे–पाडिया) को यह घोल नहीं देवें।
3. पशु को 250 से 500 ग्राम घोल खिलाने से पूर्व घोल को अच्छी तरह मिलायें।

यूरिया के जहरीलेपन के लक्षण :

अधिक मात्रा में यूरिया–मोलासेस मिश्रण खिलाने पर या जुगाली न करने वाले छोटे पशु के खाने में यूरिया के जहरीलेपन के लक्षण दिखाई देते हैं।

- मुंह से अत्यधिक लार गिरना।
- सांस लेने में परेशानी होना।
- चमड़ी व मांसपेशियों में अकड़न होना।
- अंततः समय पर उपचार न मिलने पर पशु की मृत्यु हो जाती है।

प्राथमिक उपचार :

1. यूरिया के जहरीलेपन के लक्षण दिखते ही 2.5 प्रतिशत ऐसिटिक एसिड की 2–2.5 लीटर मात्रा मुंह से सावधानी से पिलावें एवं तुरंत पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।

बांट अथवा दाने में आहार अवयवों की आवश्यक मात्रा

(प्रति 10 किग्रा. के अनुपात में)

पशु जीवन पर्यन्त उत्पादन एवं पुष्ट बना रहे, इस हेतु खिलाने के लिए निम्न आहार की आवश्यकता होती है –

1. सूखा चारा – जैसे कुत्तर, बाजरा, ज्वार की कुट्टी, घास, भूसा आदि।
2. हरा चारा – जैसे रिजका, जई, बाजरी, चरी आदि।
3. दाना – पौष्टिक संतुलित दाना मिश्रण बनाने के लिए निम्न पौषक पदार्थों की आवश्यकता होती है –

बछड़े–बछड़ी की शारीरिक वृद्धि एवं निर्वाह हेतु

1.	गेहूं की भूसी	–	2 किग्रा
2.	तिली की खल	–	3 किग्रा
3.	चने की चूरी	–	1.8 किग्रा
4.	दलिया (मक्का/जौ)	–	3 किग्रा
5.	नमक	–	100 ग्राम
6.	खनिज लवन	–	100 ग्राम

बछड़े–बछड़ी को उक्त दाना मिश्रण की 0.5 किग्रा से 1 किग्रा मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए।

दुधारू पशुओं के दुग्ध उत्पादन हेतु आहार

1.	गेहूं की भूसी	–	3 किग्रा
2.	चने की चूरी	–	2.5 किग्रा
3.	ग्वार का दलिया	–	1 किग्रा
4.	तिली की खल	–	2 किग्रा
5.	जौ का दलिया	–	1.3 किग्रा
5.	नमक	–	100 ग्राम
6.	खनिज लवन	–	100 ग्राम

दुधारू गाय अथवा भैंस को निर्वाह आहार के रूप में 2.5 किग्रा दाना एवं उत्पादकता आहार के रूप में 1 किग्रा दाना प्रति ढाई लीटर दूध उत्पादन के हिसाब से गणना कर देना चाहिए।

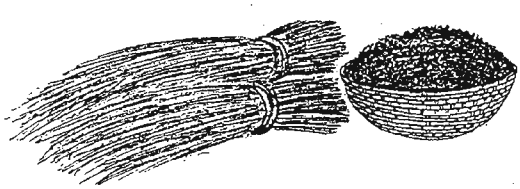

बिना दूध देने वाले प्रौढ़ पशु का निर्वाह आहार

1.	गेहूं की चापड़	–	2.8 किग्रा
2.	चने की भूसी	–	1 किग्रा
3.	जौ का दलिया	–	3 किग्रा
4.	मूंगफली या तिल की खल	–	3 किग्रा
5.	नमक	–	100 ग्राम
6.	खनिज लवण	–	100 ग्राम

बिना दूध देने वाले प्रौढ़ पशुओं को उक्त दाना मिश्रण की 2 किग्रा से 2.5 किग्रा मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए।

नोट :

1. एक पशु को अपने वजन का 2 से 2.5 प्रतिशत शुष्क पदार्थ देना चाहिए।
2. कुल शुष्क पदार्थ को दो तिहाई भाग सूखे व हरे चारे से व एक तिहाई भाग दाना से देना चाहिए।
3. यदि हरे चारे की उपलब्धता नहीं है तो आहार में एक किलो दाने की मात्रा बढ़ाई जा सकती है।
4. गाय/भैंस के ब्याने के दो माह पूर्व से ब्याने तक सामान्य खुराक के अतिरिक्त एक किलो दाना देना चाहिए।

बकरी पालन

बकरी गरीब की गाय मानी जाती है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में इसका महत्व दिनों दिन बढ़ रहा है। बकरी पालन गरीब व कमजोर वर्ग द्वारा छोटे-छोटे समूहों में किया जाता है।

राजस्थान में बकरियों की तीन प्रमुख नस्लें पाई जाती हैं - **सिरोही, मारवाड़ी, झकराना एवं जमनापारी**

बकरी पालक उचित रख-रखाव, संतुलित पोषाहार और बेहतर प्रबन्धन के द्वारा बकरियों को रोगग्रस्त होने से बचाकर निम्न प्रकार से आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकता है -

1. दुधारू बकरियों को बेचकर।
2. बकरों को माँस के रूप में बेचकर।
3. ऊन व खाल द्वारा प्राप्त आय से।
4. मिंगनियों को खाद के रूप में बेचकर।

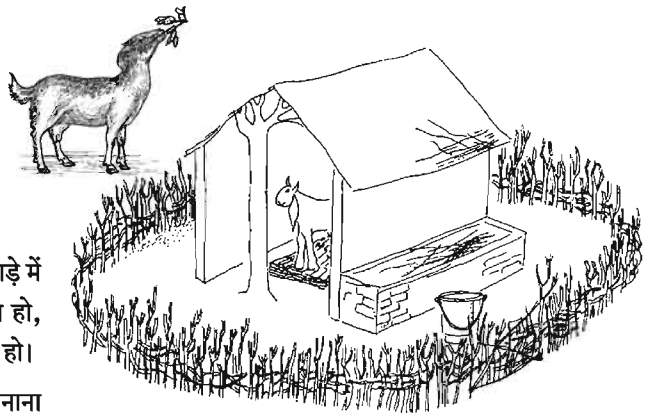

बकरियों हेतु आवास व्यवस्था :

- बकरी की आदर्श आवास सुविधा हेतु बाड़े में कुछ स्थान छपरेदार व कुछ स्थान खुला हो, जिसमें चारे एवं पानी की खेली उपलब्ध हो।
- बकरी का बाड़ा पूर्व-पश्चिम दिशा में बनाना चाहिए ताकि सूर्य की सीधी गर्मी से बचाया जा सके।
- बकरियों को खड़े रहने के लिए प्रति व्यस्क बकरी के हिसाब से 1-1.5 वर्गमीटर स्थान होना चाहिए।
- बकरी बाड़े हेतु स्थान व चयन इस हिसाब से करना चाहिए जहां पानी के रुकने की संभावना न हो।
- नर बकरे, बच्चे एवं बकरियों तथा बीमार पशुओं के लिए अलग-अलग आवास की व्यवस्था करनी चाहिए।

सफाई व्यवस्था :

बकरियां समूह में रखी जाती हैं, जिससे उनमें नजदीकी सम्पर्क होता है, अतः साफ-सफाई के नियम नहीं अपनाने पर बीमारियां एक जानवर से दूसरे जानवर में फैल जाती है। बाड़े को एवं काम में आने वाले बर्तनों को नियमित रूप से साफ करने चाहिए।

- बकरियों की मिंगनियों आदि का निस्तारण प्रतिदिन, बाड़े से दूर, गड्ढे में करना चाहिए।
- चारे व पानी की खेलियों की भी नियमित सफाई करनी चाहिए।

बाह्य एवं अन्त:परजीवियों की रोकथाम :

- बाह्य परजीवियों जैसे चींचड़े व जूएं आदि का प्रकोप होने पर उन्हें हाथों से हटाकर मार देना चाहिए तथा कीटनाशक दवा का छिड़काव करना चाहिए।
- अंतः–परजीवियों से बचाव हेतु कृमिनाशक दवा को नियमित अंतराल से पिलाना चाहिए।
- कम उम्र वाली, बीमार, कुपोषित एवं अधिक उम्र की बकरियां, परजीवी संक्रमण के प्रति अधिक संवेदनशील होती है, जिससे उनमें शारीरिक रूप से अत्यन्त क्षीण हो जाने एवं पतले दस्त लग जाने से उत्पादन में कमी हो जाती है तथा मेमनों की मृत्युदर में वृद्धि हो जाती है।

टीकाकरण :

बकरियों में नियमित टीकाकरण से संक्रामक रोगों द्वारा होने वाली पशुधन हानि को रोका जा सकता है। निम्न बीमारियों से बचाव के लिए टीकाकरण किया जाता है –

1. फिड़किया
2. माता रोग
3. मुंहपका – खुरपका।

बकरी पोषण

संतुलित दाना, चारा तथा सप्लीमेंट उत्पादन स्तर के अनुसार देवें।

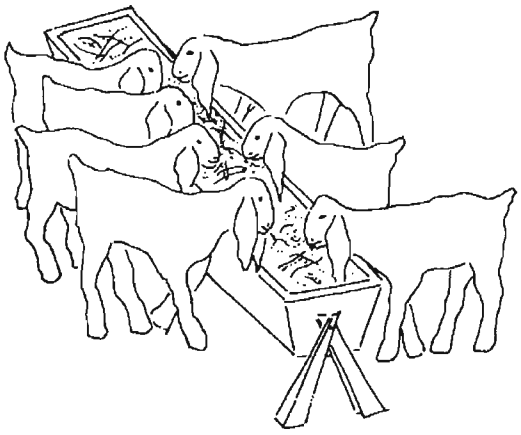

- एक बकरी को प्रतिदिन अपने शारीरिक भार के 3.5 प्रतिशत मात्रा के बराबर शुष्क खाद्य वस्तु की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति मुख्यतः खेजड़ी की सांगरी व लूंग, बेरी का पाला व देसी बबूल की पातड़ी से की जा सकती है। उपलब्धता ना होने पर फसली अवशेष भी उपयोग में लिए जा सकते हैं।
- दूध देने वाली, प्रजनन योग्य बकरियों व बकरों तथा कृषक द्वारा शीघ्र वृद्धि चाहने वाले बकरी के बच्चों को अतिरिक्त संतुलित आहार उपलब्ध करवाना चाहिए।
- 40 कि.ग्रा. वजन वाली गर्भस्थ बकरी को चारे के साथ लगभग 250 ग्राम से 300 ग्राम दाना देना चाहिए जो की गर्भस्य शिशु के उचित विकास हेतु आवश्यक है।
- दुधारू बकरी को 250 ग्राम दाना निर्वाह राशन के रूप में तथा प्रति एक लीटर दूध पर 400 ग्राम दाना उत्पादन राशन के लिए देना चाहिए।
- दलहनी चारा : चँवला, ग्वार, मूंग, चना, उड़द और मोठ का चारा कीमती दलहनी चारा है।

- बकरियों को प्रचुर मात्रा में पीने के लिए स्वच्छ जल, उपलब्ध करवाना चाहिए।
- लवन धातु नियमित रूप से देवें : जब पशु दूध दे रहा हो; गर्भावस्था में हो, पशु की वृद्धि हो रही हो।
- बकरियों के बाड़े में खनिज लवण ईंट (मिनरल ब्रिक) रखवानें से लवण धातुओं की आवश्यकता पूरी हो सकती है।

बकरी प्रजनन

बकरियों में 14-18 माह से कम आयु पर प्रजनन नहीं करवाना चाहिए अन्यथा अच्छे परिणाम प्राप्त नहीं होंगे। 14-18 माह पर गर्भधारण करने वाली बकरियां प्रथम ब्यांत पर लगभग 2 वर्ष की होगी जो कि सामान्य बच्चा जनने की उचित आयु है।

नर की प्रजनन क्षमता का उचित विकास भी लगभग 2 से 2.5 वर्ष की उम्र में होता है अतः उनको इसी उम्र में प्रजनन कार्य हेतु काम में लेना चाहिए।

बकरियों में मदकाल लगभग 24-48 घंटों का होता है। इस दौरान यदि गर्भ ना ठहरे तो बकरी 18-21 दिन बाद पुनः मदकाल में आ जाती है।

गर्भधारण के 145-153 दिन (लगभग 5 माह) बाद बकरी ब्याती है। भारतीय बकरियां प्रायः दो साल में तीन बार ब्याती हैं।

नस्ल सुधार

बकरियों में उनकी उत्पादकता को बनाये रखने एवं इसमें सुधार लाने के लिए नर व मादा बकरों का चयन उनकी मां की उत्पादन क्षमता एवं प्रति ब्यांत अधिक मेमने जनने की क्षमता के आधार पर किया जाता है। जिसकी शारीरिक वृद्धि अधिक हो और उसमें उत्तम नस्ल के गुण हो।

चयन/छंटनी

छंटनी :

बकरियां जो रेवड़ से निकाल देनी चाहिए :

1. 6 से 7 वर्ष की उम्र के बाद की बकरियां।
2. **स्वास्थ्य स्तर** : लम्बी बीमारी ग्रस्त बकरियां।
3. **जनन क्षमता** : समय पर ग्याभन ना होने वाली बकरियां।
4. **उत्पादन क्षमता** : कम उत्पादन वाली बकरियों के स्थान पर अधिक उत्पादन क्षमता वाली बकरियों के बच्चे को रखना चाहिए।
5. आनुवांशिक शारीरिक विकृतियों वाली संतान जैसे छोटा कद, तोते जैसा मुंह, बालरहित आदि।

कम उत्पादन वाली बकरियों
के स्थान पर अधिक उत्पादन क्षमता
वाली बकरियों को रखें

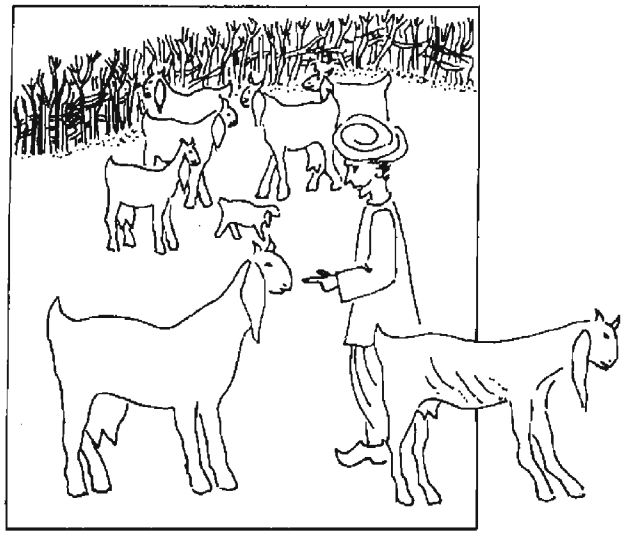

चयन :

नर बकरों को 3–6 माह की आयु में उनकी मां की उत्पादन क्षमता के आधार पर चयन करें। तत्पश्चात् एक वर्ष की आयु तक उनकी तुलनात्मक शारीरिक वृद्धि और वजन से मांस उत्पादन की जानकारी लें और अन्त में अगली पीढ़ी के लिए बकरे का चयन करें।

- जनन अंग पूर्णतया विकसित हों।
- लिम्फ नोड्स एवं त्वचा पर सूजन के लक्षण नहीं हों।
- उनमें लम्बी बीमारी से ग्रसित होने के लक्षण नहीं दिखें।
- चयनित नर बकरे की उत्पादन क्षमता और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए उन्हें अतिरिक्त चारा व दाना देना चाहिए।

अन्तः प्रजनन को रोकना :

- प्रजनन के लिए चयनित नर बकरे को उसकी मां व संतानों से जनन कभी ना करावें।
- एक नर बकरे को एक ही रेवड़ में 2 वर्ष से ज्यादा समय तक काम में नहीं लेना चाहिए।
- **बधियाकरण** – प्रजनन के काम में नहीं लेने वाले शेष नर बकरों को 6 माह की आयु के बाद बेबी कैस्ट्रेटर से बधिया कर देना चाहिए।

भेड़ स्वास्थ्य एवं प्रबन्धन

माह	माह के दौरान किया जाने वाला कार्य
जनवरी	चेचक से बचाव हेतु टीकाकरण करायें
फरवरी–मार्च	दस्त व नाभी रोग से बचाये, पेट के कीड़ों की दवा पिलायें।
अप्रैल–मई	मेमनों में फिड़किया एवं चेचक रोग से बचाव हेतु टीकाकरण करवायें।
	21 दिन बाद बुस्टर खुराक देवें।
	वयस्क भेड़ों की डिपिंग करें।
	21 दिन बाद दोबारा करें।
जून व दिसम्बर	खुरपका–मुँहपका रोग से बचाव हेतु टीकाकरण करवायें।
	पेट के कीड़ों की दवा पिलाये।
	नाक के कीड़ों से बचाव पर ध्यान दें।
जुलाई	वयस्क भेड़ों में फिड़किया रोग से बचाव हेतु टीकाकरण करवायें।
अगस्त, सितम्बर व	ब्ल्यू टंग रोग का ध्यान रखें।
अक्टूबर	पेट के कीड़ों की दवा पिलायें।
	मेमनों में फिड़किया रोग का टीकाकरण करवायें।
	21 दिन बाद बुस्टर खुराक दें।
नवम्बर	पशुमाता रोग से बचाव हेतु टीकाकरण करवायें।
	(केवल रोग की संभावना होने पर)

ऊंट पालन

राजस्थान जैसे मरुस्थलीय क्षेत्र के ग्रीमीणों के लिए ऊंट एक बहुत उपयोगी पशु है। सीमान्त एवं गरीब किसानों की खेती बाड़ी में हल जोतने, भार ढोने एवं परिवहन के साधन के रूप में इसका उपयोग आज भी अपनी महत्ता रखता है।

राजस्थान में ऊंटों की मुख्यतया तीन नस्लें पाई जाती हैं।

1. बीकानेरी
2. जैसलमेरी
3. मेवाड़ी।

बीकानेरी नस्ल के ऊंटों के सिर व कान छोटे तथा गर्दन पतली होती है। इनके तलवे छोटे तथा पूंछ लम्बी होती है। इस नस्ल के ऊंटों की रफ्तार 9-10 कि.मी. प्रति घंटा होती है। ये गहरे भूरे व हल्के लाल रंग के होते हैं।

जैसलमेरी नस्ल के ऊंटों के सिर व कान मध्यम आकार के तथा गर्दन पतली होती है। ये हल्के भूरे रंग के होते हैं। जैसलमेरी नस्ल सीमान्त मरुस्थलीय क्षेत्र में सीमा सुरक्षा बल द्वारा सुरक्षा हेतु काम में लिये जाते हैं।

मेवाड़ी नस्ल के ऊंट छोटे व गंठीले होते हैं। इनकी गर्दन व पैर छोटे तथा सीना चौड़ा होता है। इनके तलवे गोल व सख्त होते हैं। यह नस्ल मुख्यतः पहाड़ी क्षेत्रों में सवारी व बोझा ढोने के काम आती है।

आवास

एक ऊंट के लिए 2.5 मीटर से 5.5 मीटर का खुला स्थान, आवास हेतु पर्याप्त होता है।

ऊंट का आहार

ऊंट प्रतिदिन अधिक से अधिक अपनी शारीरिक भार का 1.5 से 2 प्रतिशत चारा ग्रहण करता है। ऊंट के आहार को तीन वर्गों में बांटा जाता है।

1. **हरी घास, खरपतवार, झाड़ियों, पेड़ों व शाक के पत्ते –** जैसे गोखरू, तुम्बा (इन्द्रायन), खीम्प, बूई, फोग, केर, खार, पाला, बेर, खेजड़ा, खेजड़ी, बबूल, खेरी, कुम्हटा, सीरीस, नीम आदि।
2. **शुष्क चारा :** इसमें चारे को सूखाकर भण्डारण किया जाता है। इसमें मुख्यतया ज्वार, बाजरा, मक्का तारामीरा आदि की तूड़ी व चना, मोंठ, मूंग व ग्वार का भूसा।
3. **दानें के रूप में आहार :** बाजरे व जौ का आटा, गुड़, चना, चूरी, मोंठ चूरी, मूंग चूरी, ग्वार, मक्का, गेहूं, तिल की खल व सरसों की खल आदि को दाने के रूप में खिलाया जाता है।
   - ऊंट के आहार में 30–50 ग्राम नमक प्रतिदिन देना चाहिए।
   - गर्भकाल के अंतिम चरणों में, दूध देने वाले पशुओं में व अधिक कार्य करने वाले में ऊंटों को लगभग 25% पोषक तत्व, आहार में अतिरिक्त रूप से उपलब्ध कराये जाने चाहिए।
   - खाने के तुरंत बाद ऊंट को सवारी का बोझा ढोने के काम में नहीं लेना चाहिए अन्यथा उसमें अपच, पेटदर्द व आफरे जैसी व्याधियां हो सकती है।

ऊंटों को निम्न तालिकानुसार चारा व दाना खिलाना चाहिए।

आयु वर्ग	चारा कि.ग्रा. प्रतिदिन	दाना मिश्रण कि.ग्रा. प्रतिदिन
6 माह तक	2.5	0.5
6–12 माह तक	2.5	0.5
1–2 वर्ष	5.0	1.0
2–3 वर्ष8.0	1.5	
3 वर्ष के उपरान्त	12.0	2.5
नर (प्रजनन हेतु)	14.0	3.0

ऊंट प्रजनन एवं वंशवृद्धि :

ऊंटों में प्रजनन की धीमी गति और टोडियों में अधिक मृत्युदर को देखते हुए ऊंट पालन को वैज्ञानिक तरीके से अपनाकर प्रकृति की इस धरोहर को ना सिर्फ बनाये रखे अपितु उनकी संख्या वृद्धि में अपना सक्रिय सहयोग करें। इसके लिये निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :

उम्र : प्रजनन के लिए नर ऊंट की आयु 5–16 वर्ष के बीच एवं मादा ऊंट की आयु 3 से 15 वर्ष के बीच होनी चाहिए।

शारीरिक स्वास्थ्य : प्रजनन के लिए चुने जाने वाले ऊंट व ऊंटनी किसी भी रोग से ग्रस्त ना हो।

नस्ल : प्रजनन योग्य ऊंट व ऊंटनी उत्तम नस्ल के हों।

वीर्य की जांच : नर ऊंट के वीर्य की गुणवत्ता की जांच पशु चिकित्सक से अवश्य करावें।

पोषण : सर्दी में ''रट'' या मस्ति के दौरान पौष्टिक आहार जैसे गुड़, तिल्ली का तेल 3 किग्रा. प्रतिदिन के हिसाब से व पौष्टिक दाना या दानों का मिश्रण आहार में देना चाहिए।

'रट' के दौरान ऊंट की गर्दन में ग्रन्थि से बार-बार तरल द्रव्य निकलता है और गुल्ला मुंह से बाहर आ जाता है एवं दांत चबाने जैसी एक विशेष आवाज करता है।

ऊंटनी में गाय-बकरी की तरह स्पष्ट ऋतु चक्र नही होता। ऊंटनी नवम्बर से मार्च तक, जब तक ग्याबन नहीं होती, वह गरमी में रहती है। इसमें ''फोलिक्यूलर साईकल'' होती है एवं नर ऊंट से मिलान के 36 घंटे में डिम्ब का स्खलन हो जाता है।

- एक नर से, एक प्रजनन काल में 50-60 ऊंटनियों को गर्भित करवाया जा सकता है।
- एक बार में एक नर 8 से 25 मिली. वीर्य स्खलित करता है।
- मादा ऊँटों का औसतन गर्भकाल 385 से 390 दिन होता है।

जन्म दर बढ़ाने हेतु :

- सर्दी प्रारम्भ होते ही (नवम्बर में) ऊंटनी को गर्भित कराकर अगले वर्ष दिसम्बर में बच्चा प्राप्त कर सकते हैं।
- 1.5 से 2 माह बाद पुनः गर्भित कराने से तीन वर्ष में दो बच्चे प्राप्त कर सकते हैं।

वैज्ञानिक तरीका :

- पशु चिकित्सक की सहायता से 2-3 वर्ष की ऊंटनियों को हारमोन के टीके लगवाकर, उन्हें गर्म कर गर्भित करवाने से 3.5 वर्ष की आयु में ही बच्चा प्राप्त कर सकते हैं, जो किसी भी दृष्टि से सामान्य बच्चों से कम नहीं होते ।
- 24 घंटे के अन्तराल पर एक ऊंटनी को उसी ऊंट से दोबारा मिलाने पर गर्भधारण की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

- गर्भवती ऊंटनी को किसी भी दुर्घटना से बचाव के लिए अलग रखा जाना चाहिए।
- दसवें महीने के बाद से उनका विशेष ध्यान रखना चाहिए। उनकी खुराक व वजन में निरन्तर बढ़ोतरी होनी चाहिए।
- प्रसव के समय निम्न लक्षण दिखाई देते हैं –
  - ऊंटनी के थनों में दूध उत्तर आता है।
  - प्रजनन अंग ढीले पड़ जाते हैं
  - योनि से श्वेत द्रव निकलता है।
  - ऊंटनी बार–बार उठती–बैठती है।
  - ऊंटनी की जेर प्रसव के पश्चात् 12 घंटे के अन्दर निकल जानी चाहिए अन्यथा पशु चिकित्सक की मदद लेनी चाहिए।

टोडियों में मृत्यु दर को कम करना :

1. प्रसव के बाद ऊंटनी द्वारा बच्चे को सुंघाए ताकि वो उसे अपनाकर दूध पिलाए। यह दूध (खींस) बच्चों में रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ाता है और उनकी शारीरिक वृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
2. बच्चे को एक माह तक मां का दूध पिलाएं, तत्पश्चात् दूध के साथ–साथ हरा व सूखा चारा भी थोड़ी मात्रा में देना शुरू कर देवें।
3. चूंकि ऊंटनी का प्रसव अधिकतर सर्दी में होता है। अतः नवजात बच्चे को सीधी ठण्डी हवाओं से बचाने के उपाय करने चाहिए।
4. बच्चे की नाभि को स्वच्छ निर्जर्मीकृत चाकू अथवा ब्लेड से काटें एवं नाभि में ऐन्टीसेपटिक दवा लगवाएं।
5. बच्चों को विटामिन–ए की खुराक दिलवायें।
6. तीन दिन तक ''क्लोरमफेनिकोल'' या अन्य कोई प्रतिजीवी औषधि पिलावें।
7. तीन माह के पश्चात् सर्रा (तिबरसा) से बचाव हेतु टीका लगवायें।
8. 6 माह की उम्र पर टोडियों को कृमिनाशक दवा आवश्यक रूप से पिलावें
9. 2 से 3 वर्ष की उम्र के दौरान ही ऊंट को कार्य हेतु प्रशिक्षित कर देना चाहिए।
10. एक स्वस्थ नवजात बच्चे का औसतन वजन 40–45 किग्रा होना चाहिए। इससे कम होने पर उसकी उचित देखभाल करें।

ऊंटों में पाये जाने वाले प्रमुख रोग

1. **अपच/बन्द पड़ना :**

   अधिक समय तक पौष्टिक आहार ना मिलने, पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध नहीं होने, आहार में अचानक परिवर्तन एवं आहार देने के तुरन्त बाद ऊंट को काम में लिए जाने के कारण ऊंट में अपच होकर बन्द पड़ जाता है।

   बंद पड़ने पर ऊंट सुस्त हो जाता है। वह चारा–पानी में रुचि कम लेने लगता है और जुगाली करना बन्द कर देता है। कभी–कभी पेट दर्द एवं आफरे की शिकायत भी देखने को मिल जाती है।

ऊंट को पर्याप्त आराम देते हुए उसे निम्न मिश्रण का घोल पिलावें :

कुचीला पाउडर	–	10 ग्राम
सौंठ पाउडर	–	10 ग्राम
मीठा सोडा	–	30 ग्राम
मैग्नेशियम सल्फेट	–	400 ग्राम
नमक	–	200 ग्राम

उपरोक्त मिश्रण को 2-3 लीटर पानी में घोलकर दिन में दो बार दो दिन तक पिलावें। परिणाम ना मिलने पर पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।

2. खुजली/पांव/मेंज :

समूह में रहने वाले ऊंटों में मुख्यतया सर्दी में खुजली होती है। वे ऊंट, जिनकी साफ-सफाई व बालों की कटाई एवं मालिश नियमित रूप से नहीं की जाती, में खुजली अधिक होती है।

यह बीमारी सूक्ष्म बाह्यपरजीवी सोरोप्टिक व सारकॉप्टीक के कारण होती है। मादा परजीवी के ऊंट की चमड़ी में प्रवेश करने से जलन होती है एवं खुजली चलती है।

इसके उपचार हेतु एक हिस्सा गंधक और चार हिस्से तारामीरा या सरसों के तेल को मिलाकर पेस्ट बनाएं तथा बालों की कटाई के पश्चात् प्रभावित स्थान पर लगायें। इसे सप्ताह में दो या तीन बार दोहरायें।

3. तिबरसा (सर्रा) :

ऊंटों की यह प्रमुख बीमारी टैबेनस (घोड़ा मक्खी) के काटने से, ट्रिपेनोसोमा इवानसाई नामक रक्त परजीवी के कारण एक ऊंट से दूसरे ऊंट में फैलती है।

प्रभावित ऊंट की आंखे मंद पड़ जाती हैं और सुस्त हो जाता है। गर्भवती ऊंटनी का गर्भपात हो जाता है। रोग के बढ़ने पर पेट के नीचे, पिछली टांगों पर एवं आंख के गड्ढे में पानी भर जाता है। इस रोग में क्रमिक बुखार रहता है, खून की कमी से पशु कमजोर हो जाता है एवं मृत्यु तक हो जाती है।

तिबरसा रोग के लक्षण दिखने पर खून की जांच करावे एवं ऊंट को आराम व पौष्टिक आहार देवें तथा पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार करावें। प्रभावित क्षेत्रों में प्रत्येक वर्ष अपने ऊंटों में सर्रारोधी टीके लगवा दें।

कुक्कुट पालन

मुर्गे-मुर्गियों को पालन कर, व्यवसाय के रूप में आय का अच्छा स्रोत बनाया जा सकता है। वैसे तो बहुत पुराने तरीके से ही मुर्गी पालन का कार्य किया जाता है किन्तु इसे वृहद स्तर पर वैज्ञानिक तरीके से करने से कम समय में अधिक उत्पादन एवं अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

कुक्कुट पालन में दो प्रकार की प्रजातियां होती हैं। एक प्रजाति से कम समय में अधिक मांस का उत्पादन प्राप्त होता है। इन्हें ब्रायलर कहते हैं। दूसरी प्रजाति अधिक अण्डा उत्पादन वाली होती है इन्हें लेयर कहते हैं।

ब्रायलर उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न, प्लाईमाउथरॉक, कार्निश, ससेक्स, आर.आई.आर. प्रमुख प्रजातियां है तथा अण्डा उत्पादन हेतु लेयर पक्षियों की व्हाइट लेगहार्न, आस्टरलेप आदि प्रमुख प्रजातियां हैं।

भारत में मुर्गे का मांस व अण्डों की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसके कारण निम्न हैं -

- मुर्गे का मांस अपेक्षाकृत सस्ता व सुपाच्य होता है जिसे हृदय रोगी भी आसानी से पचा सकता है।
- इसके मांस में सभी प्रकार के आवश्यक अमीनो अम्ल उपस्थित होते हैं, जो हमारे शरीर में होने वाली विभिन्न उपापचयी क्रियाओं को भली प्रकार संचालित करने व शारीरिक वृद्धि में उपयोगी होते हैं।
- मुर्गी का अण्डा एक आदर्श खाद्य पदार्थ है जिसमें प्रोटीन की भरपूर मात्रा में भी आसानी से पच सकता है।
- अण्डे मांस की अपेक्षा सस्ते व सुलभ होते हैं तथा दूर-दराज के क्षेत्रों में भी आसानी से लाये-ले जाये जा सकते हैं।

कुक्कुट पालन का व्यवसाय प्रारम्भ करने से पूर्व कुक्कुट पालक को इस व्यवसाय से सम्बन्धित पूर्ण जानकारियां होनी चाहिए जैसे अच्छे चूजे कहां से प्राप्त करने हैं, चूजों को फार्म पर लाने से पूर्व फार्म पर क्या-क्या तैयारियां करनी हैं, पानी-बिजली व दाने की व्यवस्था, मौसमी प्रकोपों से बचाव, रोगों की रोकथाम हेतु आवश्यक टीकाकरण, फार्म पर बीमारी आने पर पक्षियों की देखभाल व चिकित्सा, उत्पादन आरम्भ होने पर मांस व अण्डों का विपणन इत्यादि । उपरोक्त जानकारियां प्राप्त करने के लिए 15 दिवसीय कुक्कुट पालन प्रशिक्षण कुक्कुट फार्म अजमेर से प्राप्त किया जा सकता है।

कुक्कुट प्रबन्धन एवं आवास :

मुर्गी फार्म बनाने हेतु स्थान का चयन करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है -

- फार्म की जगह अपेक्षाकृत ऊंचे स्थान पर होनी चाहिए जिससे वर्षा का पानी, कीचड़ एकत्रित न हो।
- फार्म तक आने-जाने के लिए सड़क होनी चाहिए तथा मुख्य सड़क से जुड़ी होनी

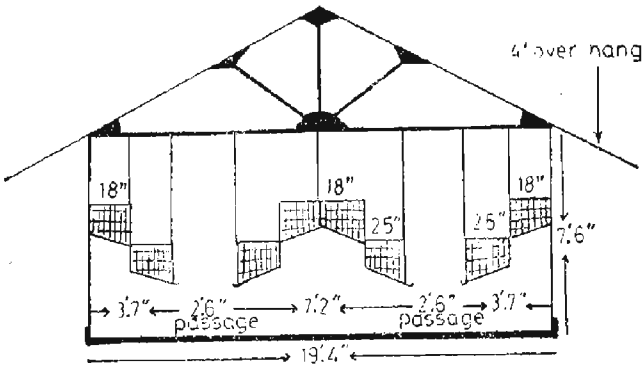

चाहिए ताकि दाना, अण्डे आदि लाने ले जाने के लिए सुविधा रहे तथा उत्पादों का विपणन समय से हो सके।

- फार्म पर स्वच्छ पानी व बिजली की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- फार्म के आस-पास खुला स्थान होना चाहिए तथा छायादार वृक्ष होने चाहिए।
- फार्म के आस-पास हरे चारे की व्यवस्था होनी चाहिए।

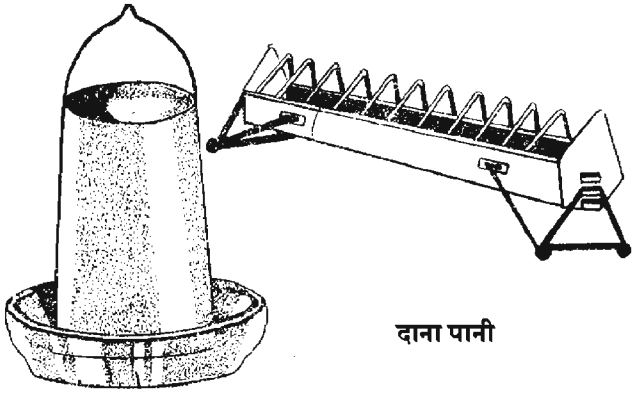

दाना पानी

- फार्म बनाने के लिए ऐसी सामग्री का उपयोग होना चाहिए जो कुक्कुट पालक के लिए सस्ती हो तथा पक्षियों के लिए सर्दी, गर्मी व बरसात तीनों मौसमों में आरामदायक हो।
- फार्म का निर्माण करते समय इसकी दिशा पूर्व-पश्चिम होनी चाहिए अर्थात् फार्म का चौड़ाई वाला भाग उत्तर-दक्षिण में हो तथा इसी भाग पर जालियां व दरवाजे होने चाहिए ताकि सूर्य की धूप सीधी फार्म में न आये।

फार्म/दड़बे का निर्माण :

- निर्माण हेतु प्रयुक्त सामग्री कुक्कुट पालक के लिए आर्थिक दृष्टि से सस्ती व सुलभ होनी चाहिए।
- दड़बे के निर्माण के लिए नींव पूरी भरी होनी चाहिए।
- जालियां लगाने से पूर्व दो फिट ऊंची दीवार बनाकर फिर तीन फिट ऊंची जाली लगानी चाहिए।
- छत बनाते समय टिन, एस्बेस्टस की चद्दर, छप्पर, आर.सी.सी. व केलू का उपयोग कर सकते हैं। छत के दोनों तरफ लगभग दो फिट का छज्जा निकला होना चाहिए, ताकि वर्षा की सीधी बौछारें फार्म के अन्दर न आये व तेज हवा का भी रुकाव हो सके।
- तेज हवा से बचाव के लिए जालियों पर पर्दे लगाये जा सकते हैं। लेकिन ध्यान रहे कि दड़बे में घुटन न हो व शुद्ध हवा का आवागमन जारी रहे।
- दड़बे में फर्श पक्का होना चाहिए तथा ऐसा होना चाहिए कि उसमें चूहे बिल ना बना सके।
- चूजे, ब्रायलर, ग्रोवर, लेयर व पुराने पक्षियों को रखने व दाने के लिए पृथक-पृथक दड़बे व कक्ष होने चाहिए।
- ब्रायलर हेतु अधिकतम 1 वर्ग फीट तथा मुर्गियों के लिए 2.25 से 3 वर्ग फीट जगह प्रति मुर्गी आवश्यक है।

एक दिवसीय/नवजात चूजे लाने से पूर्व दड़बा व ब्रूडर तैयार करना :

- दड़बे को साफ कर उसमें फार्मेलिन दवा का छिड़काव करें।
- प्रयुक्त किये जाने वाले दाने-पानी के बर्तन इत्यादि की सफाई कर उन्हें जीवाणु नाशक दवा के घोल से धोकर साफ कर लेना चाहिए।

- फर्श पर चूना बिखेरने के पश्चात् बिछावन (लिटर) डालनी चाहिए तथा चूजे आ जाने पर उन्हें सर्वप्रथम ब्रूडर के नीचे अखबार बिछाकर छोड़ना चाहिए।
- चूजे लाने के चौबीस घंटे पूर्व ही ब्रूडर शुरू कर देना चाहिए ताकि ब्रूडर का तापमान चूजों के शरीर के तापमान के बराबर बना रहे।
- चूजों को ब्रूडर में डालने के पश्चात् थकान दूर करने के लिए स्वच्छ जल में इलेक्ट्रोलाइट व ग्लूकोज का घोल पिलाना चाहिए।

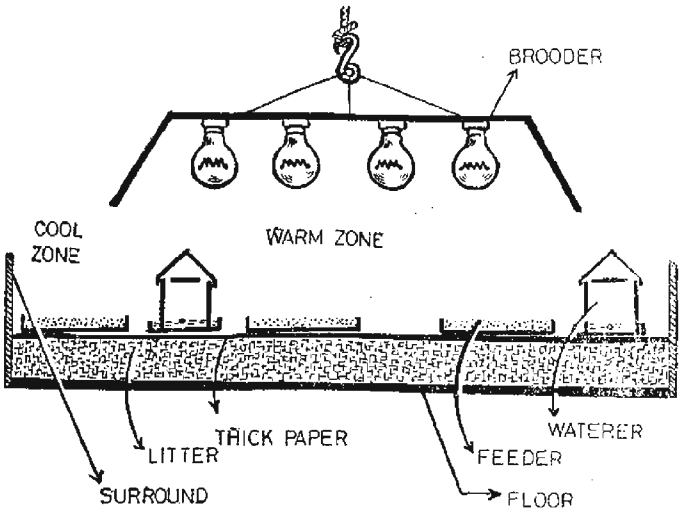

- ब्रूडर में चौबीस घंटे रोशनी की पूरी व्यवस्था होनी चाहिए।
- तीन चार दिन बाद अखबार व चिक गार्ड को हटा देना चाहिए।
- पन्द्रह दिन की आयु में चूजों को बारीक ग्रिट देना आरम्भ कर देना चाहिए। इसी समय हरा चारा बारीक काटकर थोडा-थोडा देना चाहिए जैसे रिजका, गोभी के पत्ते, गाजर के पत्ते पालक इत्यादि।

मुर्गी दाने के प्रकार

ब्रायलर हेतु : ब्रायलर उत्पादन हेतु 1-20 दिनों तक के चूजों के लिए उपयोग में लाया जाने वाला दाना ब्रायलर चिक स्टॉटर दाना कहलाता है, तथा 21-40 दिन तक उपयोग में लाया जाने वाला दाना फिनिशर राशन कहलाता है।

लेयर हेतु : अण्डे वाली मुर्गियों के चूजों को एक से सात हफ्तों तक चिक स्टॉटर, 8-17 हफ्तों तक ग्रोवर व 18 दिन से अधिक हफ्तों तक, जब अण्डे पर आती है, लेयर राशन दिया जाता है।

इन सभी प्रकार के दाने या राशन में उम्र व उत्पादन के अनुसार वृद्धि हेतु प्रोटीन तथा ऊर्जा हेतु कार्बोहाईड्रेट की मात्राओं का सही अनुपात लिया जाता है।

अधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु कुक्कुट पालक को निम्न बातों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है:

- फार्म व दड़बे साफ-सुथरे हो व दवा का छिड़काव किया हुआ हो।
- फर्श पर काम में ली गई बिछावन/लीटर को प्रतिदिन पलटना चाहिए जिससे उसमें नमी न रहे अन्यथा खूनी दस्त (कोक्सीडियोसिस) की संभावना बनी रहती है।
- स्वच्छ पानी, बिजली, दानों का पूर्ण प्रबन्धन होना चाहिए।
- एक दिवसीय चूजे से बड़े पक्षी होने तक टीकाकारण का विशेष ध्यान रखना चाहिए अन्यथा एक बार फार्म पर बीमारी

फैलने पर भारी मात्रा में चूजे व पक्षी मर सकते हैं तथा कुक्कुट पालक को भारी आर्थिक क्षति हो सकती है।

- पक्षियों के लिए दाने–पानी के बर्तन पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए।
- ब्रायलर व लेयर पक्षियों को उनकी आवश्यकता के अनुसार जगह देनी चाहिए।
- लेयर पक्षियों के दड़बे में 20 घोंसले प्रति 100 पक्षी के हिसाब से बनाने चाहिए।
- पक्षियों के दाना–पानी का समय निश्चित रखना चाहिए व किसी निश्चित व्यक्ति द्वारा ही यह काम प्रतिदिन किया जाना चाहिए अन्यथा अनजान व्यक्ति से मुर्गियां अस्त–व्यस्त हो जायेगी व अण्डा उत्पादन कम हो जायेगा।
- दड़बों के आसपास किसी प्रकार का शोर–शराबा नहीं होना चाहिए।
- पक्षियों को दाना डालते समय ध्यान रखना चाहिए कि पक्षी इसे बिखेरकर बरबाद न करे इसके लिए फीडरों को एक बार में आधा ही भरना चाहिए।

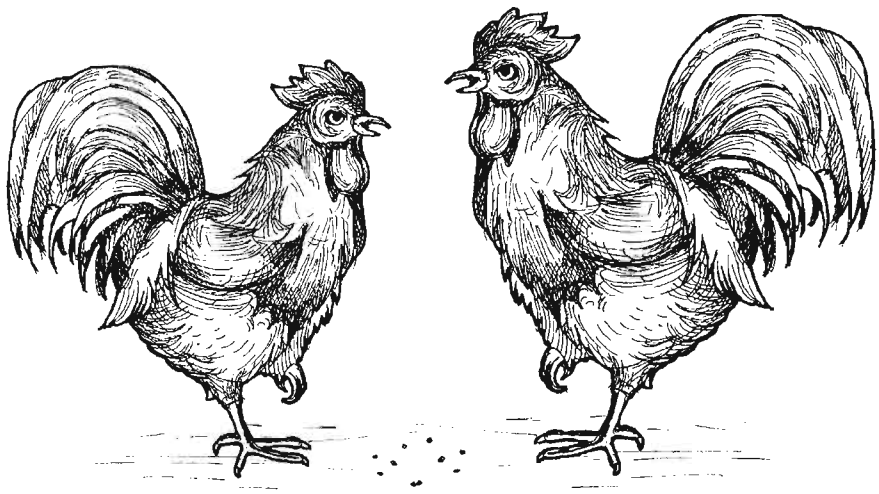

अण्डा देने वाली मुर्गियों के लिए टीकाकरण कार्यक्रम

क्र.सं.	टीकाकरण उम्र	उपयोगी टीके का नाम	प्रयुक्त तरीका	प्रकार
1.	पैदा होने पर	मैरेक्स	त्वचा के नीचे 0.2 फो.	एच.बी.टी.
2.	3-5 दिन	कोक्सीडिओसिस	पानी में	कॉक्सीवैक
3.	7 दिन	रानी खेत	आंख/नासाछिद्र में	लासोटा या एफ स्ट्रेन
4.	14 दिन	गम्बोरो रोग	पानी में	ल्यूकर्ट
5.	25 दिन	संक्रामक ब्रोंकाइटिस	आंख/नासाछिद्र में	मांस
6.	28 दिन	रानी खेत	पानी में	लासोटा
7.	6 सप्ताह	चेचक	विंग वेब में	स्टेंडर्ड
8.	10 सप्ताह	रानी खेत	त्वचा में	आर.बी.
9.	12 सप्ताह	गम्बोरो रोग	पानी में	इन्टरमीडिएट
10.	13 सप्ताह	संक्रामक ब्रोंकाइटिंस	पानी में	मांस
11.	16 सप्ताह	चेचक	मांस में 0.2 मि.	स्टेंडर्ड
12.	17 सप्ताह	एनसिफ्लिोमाइलाइटिस	पानी में	कैलेंक
13.	19 सप्ताह	रानी खेत+गम्बोरो+सं.ब्रोंकाइटिस (ट्रिपल वैक्सीन किल्ड के लिए)	मांस में	कम्बाईंड टीका

ब्रायलर मुर्गियों के लिए टीकाकरण कार्यक्रम

क्र.सं.	टीकाकरण उम्र	उपयोगी टीके का नाम	प्रयुक्त तरीका	प्रकार
1.	0 दिन	मैरेक्स	त्वचा के नीचे	
2.	7 दिन	रानी खेत	आंख/नासाछिद्र	एफ स्ट्रेन
3.	14 दिन	गम्बोरो रोग	पानी में	ल्यूकर्ट
4.	28 दिन	रानी खेत	पानी में	लासोटा
5.	33 दिन	गम्बोरो रोग	पानी में	इन्टर मीडिएट

पशु नस्ल सुधार का आधार है बधियाकरण

पशु को जनन से अयोग्य करने को कैची लगवाना, सूधा या सूयाणां या बधिया कराना कहते हैं। बधियाकरण एक साधारण मशीन द्वारा बिना पीड़ा व चीरे के मानवीय तरीके से भी किया जाता है। प्रत्येक पशु चिकित्सालय में यह सुविधा उपलब्ध है।

लाभ :

1. नाकारा व निम्न सांडों के बधियाकरण द्वारा अवांछित जनन पर रोक लगाई जा सकती है ताकि जनन द्वारा नाकारा बछड़े-बछड़ी पैदा न हो।
2. बधियाकरण द्वारा तैयार बैलों द्वारा अधिक क्षमता से कार्य हो पाता है।
3. मांस पैदा करने वाले पशुओं की वृद्धि शीघ्र होती हैं
4. बधियाकरण से नर पशु शांत व आज्ञाकारी बन जाते हैं।

बधियाकरण कुछ तथ्य :

1. 2 से 3 माह की आयु का बछड़ा बधियाकरण के लिए उपयुक्त रहता है। बकरे व मेंढ़े के लिए 2 से 6 सप्ताह में बधियाकरण किया जाना उपयुक्त रहता है।
2. वर्षा के दौरान बधियाकरण न कराएं।
3. बधियाकरण के लिए अण्डकोषों को कुटवाना, चीरा लगवाना, निकलावाना अमानवीय क्रूर तरीके हैं। अतः ऐसा न करें।
4. कृत्रिम गर्भाधान व नस्ल सुधार कार्यक्रम की सफलता के लिए अपने अथवा आसपास के नकारा सांडों का बधियाकरण आवश्यक रूप से कराएं।
5. राजस्थान में पशुधन सुधार अधिनियम के तहत नाकारा पशु के बधियाकरण कराया जाना कानूनी बाध्यता है।

पशु का बीमा कराया जाना लाभकारी

बीमा कम्पनियों (नेशनल इंश्योरेंस, न्यू इंडिया इंश्योरेंस, ओरिएंटल इंश्योरेंस कम्पनी लि., यूनाइटेड इंश्योरेंस कम्पनी आदि) की पशु बीमा पालिसी के अन्तर्गत गाय, बैल, भैंस, ऊंट, घोड़ा, बकरी, कुत्ता व अन्य सभी पालतू पशुओं का बीमारी एवं दुर्घटना हेतु बीमा कराया जा सकता है।

पशु जिनका आप बीमा कराना चाहते हैं, उसका प्रस्ताव पत्र पशु चिकित्सक से पशु स्वास्थ्य प्रमाण पत्र प्राप्त कर बीमा कम्पनी या उसके अभिकर्ता से सम्पर्क करें

पशु की पहचान हेतु टेग को जो कि कान में लगाया जाता है, को सुरक्षित रखें। टेग गिर जाने पर तत्काल बीमा कम्पनी को सूचित करें तथा दूसरा टेग एवं स्वास्थ्य प्रमाण-पत्र प्राप्त करें।

पशु की मृत्यु या अपंगता के समय दावा हेतु तत्काल बीमा कम्पनी को सूचित करें तथा अधिकृत पशु चिकित्सक से मृत्यु प्रमाण पत्र/पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्राप्त कर दावा पत्र मय टेग प्रस्तुत करें।

पशु बीमा करवाकर पशुओं की अकाल मृत्यु से होने वाली हानि से बचें।

पॉलीथीन : पशुओं के लिए जानलेवा

पॉलीथीन व अखाद्य पदार्थों को पशु क्यों खाते हैं ?

पशुओं द्वारा सामान्यतः पॉलीथीन एवं अन्य खाद्य पदार्थों को नहीं खाना चाहिए। किन्तु पाईका रोग होने पर पशु मिट्टी व अन्य अखाद्य पदार्थ खाने लगता है जिसके प्रमुख कारण निम्न है :

- पशु को संतुलित आहार नहीं मिलने पर, पशु के शरीर में कई जरूरी तत्व, खनिज लवण आदि की कमी हो जाती है। पशु शरीर में विशेषकर फास्फोरस व कैल्शियम तत्व की कमी के कारण पाईका रोग हो जाता है। जिसमें पशु मिट्टी व अन्य अखाद्य पदार्थ खाने लगता है।
- अन्तः परजीवी व बाह्य परजीवी भी पाईका रोग में सहायक होते हैं।
- पशुओं को पशुपालक संतुलित एवं पर्याप्त आहार उपलब्ध नहीं कराते हैं एवं चरने के लिए खुला छोड़ देते हैं। चारागाह के अभाव में पशु आवासीय क्षेत्रों में घूमते हैं। आवासीय क्षेत्रों में खाद्य सामग्री जैसे सब्जियां, फल आदि के अवशेषों को पालिथिन की थैली में बन्द कर फैंके जाने से पशु इन्हें थैली सहित खा लेता है।

पॉलीथीन/प्लास्टिक खाये पशु में रोग के लक्षण :

- अधिक मात्रा में पॉलीथीन व प्लास्टिक खाने पर ये पशु के पेट (रुमन) में एकत्रित हो जाती है।
- पॉलीथीन को पशु पचा नहीं सकते हैं।
- पशु को भूख कम लगती है व कमजोर हो जाता है।
- बार-बार आफरा आता है व पेट फूला हुआ रहता हैं।
- अखाद्य पदार्थों में कील, सुई आदि होने पर यह पेट के माध्यम से हृदय या फैफड़ों को भी हानि पहुंचा कर घातक रोग उत्पन्न करते हैं।

उपचार :

पॉलीथीन व अखाद्य पदार्थों के कारण होने वाले आफरे एवं अन्य रोगों का एकमात्र उपचार शल्य क्रिया द्वारा रूमनोटोमी ऑपरेशन कर इन्हें बाहर निकालने पर ही संभव है।

- पशु को संतुलित आहार उपलब्ध करायें।
- समय-समय पर कृमिनाशक दवा पिलावें।
- पाइका रोग (मिट्टी व अन्य अखाद्य पदार्थों के खाने की स्थिति) होने पर पशु चिकित्सक से उपचार करायें एवं पर्याप्त मात्रा में मिनरल मिश्रण देवें।

सावधान ! पशुओं एवं पर्यावरण के लिए घातक पॉलीथीन के उपयोग प्रदेश में प्रतिबन्धित है जिसके तहत जुर्माना व जेल की सजा का प्रावधान भी किया गया है।

पॉलीथीन/प्लास्टिक का उपयोग स्वयं न करें व किसी अन्य को भी न करने दें और पर्यावरण के साथ-साथ अपने पशुधन की रक्षा करें।

पशु प्रजनन एवं नस्ल सुधार

पशु के ऋतु/ताव/पाली में आने वाले लक्षण

(अ) बाह्य लक्षण :

- पशु बैचेन रहता है व बार-बार रम्भाता हैं।
- दूसरी गायों को एवं उनके जननांगों को सूंघता हैं।
- किसी अन्य गाय पर चढ़ने की कोशिश करता है, अथवा अन्य पशु के चढ़ने पर खड़ा रहता है।
- आहार कम कर देता है तथा दूध उत्पादन में भी कुछ कमी होती है।
- योनिमुख गीला, लाल व कुछ सूजा हुआ होता है।
- योनिमुख से थोड़ा साफ तरल, पारदर्शी श्लेष्मा (म्युकस) पदार्थ निकलता है जो कि योनिमुख से लगभग एक फुट लम्बे तार के रूप में लटकता रहता है।

(ब) आन्तरिक लक्षण :

- गर्भाशय एवं उसके सींग सख्त हो जाते हैं।
- गर्भाशय का मुख खुला हुआ होता है।
- डिम्बाशय का फॉलिकल, मटर के दाने के समान बड़ा हो जाता हैं ।

कृत्रिम गर्भाधान

कृत्रिम गर्भाधान ऐसी वैज्ञानिक विधि है, जिसमें उन्नत नस्ल के सांड से प्राप्त वीर्य का कृत्रिम रूप से तरलीकरण करकर, तरल नत्रजन में संरक्षित किया (जिसे हिमकृत वीर्य कहते हैं) जाता है। जिसे गाय या भैंस के ताव या ऋतु में आने पर उपयुक्त समय पर एक विशेष उपकरण (ए.आई.गन) द्वारा योनिमुख से गर्भाशय में डाला जाता है । इस विधि द्वारा प्रजनन कराना ही कृत्रिम गर्भाधान कहलाता है।

गुदामार्ग में हाथ डालकर वीर्यदान करने की विधि

कृत्रिम गर्भाधान से लाभ :

- उच्च गुणवत्ता के सांड से संग्रह किये हुए वीर्य को तरल नत्रजन में वर्षों तक सुरक्षित रखते हुए प्रजनन के उपयोग में लिया जा सकता है।

- आवश्यकता के अनुसार दूरदराज तक ले जाकर हिमकृत वीर्य प्रजनन हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।
- इस विधि से एक ही समय में एक ही सांड के वीर्य से हजारों मादा पशुओं को गर्भित किया जा सकता है।
- इस विधि द्वारा छूतदार जनन रोग नहीं फैलते हैं।
- उत्तम सांड यदि शारीरिक रूप से विकलांग हो जाये अथवा मादा पशु के विकलांग, छोटे कद की या प्राकृतिक परिसेवा में असमर्थ होने पर भी कृत्रिम गर्भाधान से संतानोत्पत्ति कराई जा सकती है।
- प्रजनन के लिए उत्तम सांड रखने में अधिक दाना चारा व रख-रखाव में होने वाले खर्च को कृत्रिम गर्भाधान से बचाया जा सकता है।
- इस विधि द्वारा, संकर प्रजनन द्वारा कम उत्पादकता वाले देसी पशु से उत्तम गुणवत्ता की संतति प्राप्त की जा सकती है।

कृत्रिम गर्भाधान से पूर्ण लाभ प्राप्त करने हेतु ध्यान देने योग्य बिन्दु :

- पशु को उपयुक्त ताव में कृत्रिम गर्भाधान करायें। गाय के लिए 12-20 घंटे एवं भैंस के लिए 16-24 घंटे के मध्य ताव में होने पर कृत्रिम गर्भाधान करायें।
- कृत्रिम गर्भाधान से पूर्व पशु चिकित्सक को पशु के गत ब्यांत में रोग, गर्भपात, जेर समय पर न गिरने या समय पर ताव में नहीं आने आदि की पूर्ण जानकारी देवें।
- योनिमुख से निकलने वाले श्लेष्मा (म्युकस) यदि पारदर्शी, चमकदार न हो तो पहले उपचार करायें तत्पश्चात् कृत्रिम गर्भाधान करायें।
- कृत्रिम गर्भाधान हेतु उपयोग में लिये जा रहे हिमकृत वीर्य की वंशावली की जानकारी रखें।
- कृत्रिम गर्भाधानकर्ता को तरल नत्रजन में हिमकृत वीर्य के भण्डारण, विधिपूर्वक उपयोग करने में पूर्ण सावधानी रखनी चाहिए।

सामान्यतः एक गाय 1.5 से 2.5 वर्ष एवं भैंस 3 से 5 वर्ष की उम्र तक शारीरिक रूप से परिपक्व हो जाती है। इसके पश्चात् भी पशुओं में ताव में ना आने कारण ऐसे पशु जो समय पर ताव के लक्षण नहीं दिखाते, उनमें दो ब्यांतों का अन्तराल ज्यादा होने के कारण उत्पादन क्षमता कम हो जाती है और पशुपालक वांछित आर्थिक लाभ से वंचित हो जाता हैं

प्राकृतिक परिसेवा

उत्तम नस्ल के चयनित नर पशु (सांड) द्वारा मादा में प्राकृतिक विधि द्वारा गर्भाधान कराने को प्राकृतिक परिसेवा कहते हैं।

प्राकृतिक परिसेवा का महत्व :

ग्रामीण परिवेश में वर्षों से पशुपालक अपने पशुधन जैसे गाय, भैंस आदि को गर्भित कराने हेतु सांड पालते हैं। सांड का चयन उसकी नस्ल, गुणवत्ता एवं उसके वंशज की उत्पादकता के आधार पर की जानी चाहिए ताकि प्राकृतिक परिसेवा से आपके पशुधन में नस्ल सुधार के साथ-साथ अधिक उत्पादकता वाली संतति प्राप्त हो। अतः प्राकृतिक परिसेवा हेतु सांड के चयन में निम्न बिन्दुओं को ध्यान रखना चाहिए।

1. सांड पशुधन की नस्ल के अनुसार चयनित हो।
2. सांड को संतुलित आहार एवं पौष्टिक चारा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो।
3. सांड को उचित व्यायाम मिले।
4. एक गांव में तीन वर्ष से अधिक एक सांड द्वारा प्राकृतिक परिसेवा नहीं दी जावे। यदि ऐसा होता है तो संतति के गुणों में अन्तः प्रजनन के कारण से विकार उत्पन हो सकते हैं।
5. सांड प्रजनन संबंधी रोग से ग्रसित नहीं होना चाहिए।
6. समय-समय पर सांड के वीर्य की जांच भी पशु चिकित्सालय में करवानी चाहिए ताकि प्रजनन संबंधी रोगों की जानकारी हो सके।

- सांड से सप्ताह में 3-4 परिसेवा से अधिक नहीं ली जावे।
- यदि मादा पशु में किसी प्रकार के प्रजनन रोग, गर्भपात आदि की जानकारी मिले तो सांड द्वारा प्राकृतिक परिसेवा नहीं दी जानी चाहिए। इन मादा पशुओं को पूर्ण उपचार कराये जाने के पश्चात् ही गर्भित करायें।
- सांड के आहार में निम्न का समावेश भी करें।
  - चारा, चूरी, ज्वार या बाजरे का दलिया, गुड़, चापड़ एवं विटामिन युक्त खनिज लवण।

विभाग द्वारा ग्राम पंचायत स्तर पर विशिष्ट नस्ल वाले सांड का निःशुल्क वितरण कुछ शर्तों पर किया जाता है। अतः गिर, थारपारकर, मुर्रा आदि सांड द्वारा अवर्गीकृत मादा पशुओं में प्राकृतिक परिसेवा का लाभ पशुपालक उठा कर उच्च गुणवत्ता और अधिक दुग्ध उत्पादक संतति प्राप्त कर सकते हैं।

मादा पशु के ताव में ना आने के कारण एवं निवारण :

इससे पशुपालकों को आर्थिक रूप से काफी नुकसान उठाना पड़ता है। अतः इसके कारणों को जानकर उन्हें उचित समय पर दूर करना आवश्यक है।

कारण :

1. कुपोषण : संतुलित आहार एवं हरे चारे के अभाव में पशु कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। जिससे पशु ताव में नही आता हैं।
2. खनिज लवणों व विटामिन्स की कमी।
3. हारमोन्स का असंतुलन।
4. अण्डकोष एवं गर्भाशय आदि की विकृति।
5. गर्भाशय में सूजन, मवाद और संक्रामक रोगों का होना।

निवारण :

1. पशुओं को नियमित अंतराल पर कृमिनाशक दवा दें।

2. पशुओं को संतुलित पौष्टिक आहार उपलब्ध करायें।
3. खनिज तत्व एवं विटामिन्स मिश्रण नियमित रूप से पशुओं को आहार में देते रहें।
4. पशु जिनमें ताव के बाह्य लक्षण प्रदर्शित नहीं होते, ऐसे पशुओं (साइलेंट ब्रीडर) को सांड (टीजर) रखकर इस समस्या को कुछ हद तक दूर किया जा सकता है।
5. हारमोन्स असंतुलन, बच्चेदानी में संक्रमण, गर्भपात व अन्य प्रजनन सम्बन्धी व्याधियों का निकटतम पशु चिकित्सक से निवारण करवाना चाहिए।

गाय–भैंसों को बार–बार ग्याभन कराने के बाद भी ना रुकने की समस्या (रिपीट ब्रीडर)

रिपीट ब्रीडर गाय/भैंस वह होती है, जो दो या दो से अधिक बार गर्भाधान करवाने के बाद भी नहीं रुकती है अथवा बार–बार ताव में आती है और ठहरती नहीं है।

रिपीट ब्रीडिंग से पशुपालकों को नुकसान :

1. दो ब्यांत का अंतराल ज्यादा हो जाता है, जिससे पशु को नियमित आहार उपलब्ध करवाते हुए पशुपालक को भारी क्षति उठानी पड़ती है।
2. दुग्ध उत्पादन कम हो जाता है।

रिपीट ब्रीडिंग के कारण :

1. प्रजनन अंगों जैसे गर्भाशय में जीवाणु, विषाणु एवं प्रोटोजोआ संक्रमण या इसके कारण होने वाली एण्डोमेट्राईटिस।
2. हारमोन्स का असंतुलन।
3. अंडे का देरी से अथवा विसर्जन नहीं होना।
4. अण्डेदानी में सिस्ट अथवा निम्फोमेनिया।
5. उचित समय पर गर्भाधान नहीं करवाने से निषेचन का नहीं होना।

रिपीट ब्रीडिंग का उपचार :

- गर्भाशय में जीवाणु संक्रमण होने पर ल्यूगोल्स सोल्यूशन (1:2) अथवा किसी रोग प्रतिरोधक दवा के घोल को पर रैक्टम विधि द्वारा गर्भाशय में तीन–चार दिन तक डालते हैं।
- अधिक गर्मी में आने वाली गायों को ग्याभन कराने के पश्चात् पशु चिकित्सक की राय से आवश्यक उपचार करावें।
- निषेचन में सफलता का प्रतिशत बढ़ाने के लिए गायों को बोलने के 12 घंटे बाद एवं भैंसों को 16 घंटे बाद ग्याभन करवाना चाहिए।

पशुओं में प्रजनन सम्बन्धी रोग

पशुओं को स्वस्थ रखने और उनसे नियमित दुग्ध उत्पादन प्राप्त करने हेतु आवश्यक है कि पशुओं को बांझपन एवं प्रजनन सम्बन्धी रोगों से बचायें। पशुओं में प्रजनन सम्बन्धी मुख्य रोग इस प्रकार है :

I गर्भपात :

गाय/भैंसों में निश्चित समय से पूर्व मरे हुए अथवा जीवित ना रहने की संभावना वाले भ्रूण का बच्चेदानी से बाहर फेंकने को गर्भपात कहते हैं।

कारण :

1. जीवाणु, विषाणु और प्रोटोजोआ से होने वाले मुख्य रोग।
2. हारमोन्स का असंतुलन।
3. ग्याभन पशुओं में परिवहन आदि का दबाव, चोट-दुर्घटना अथवा कृत्रिम गर्भाधान एवं गर्भाशय में दवा डालना।
4. रासायनिक पदार्थ, औषधियां, विषाक्त पेड़-पौधों के सेवन से।
5. पौषक तत्वों की कमी।
6. अनुवांशिक कारण।

उपचार :

1. संक्रामक रोगों से होने वाले गर्भपात में गर्भाशय में चिकित्सक की सलाह अनुसार रोग प्रतिरोधक दवा का घोल नियमित रूप से 5-7 दिन तक डालें।
2. गर्भपाती भ्रूण और सम्बन्धित द्रव की प्रयोगशाला से जांच करवाकर उसके निदान अनुसार पशु की चिकित्सा करावें।
3. ग्याभन पशु में गर्भपात के ऊपर वर्णित अन्य कारणों का तद्नुसार निवारण करें।

II पशुओं में जेर का अटकना :

सामान्यतः पशु के ब्याने के पश्चात् 3 से 8 घंटे के अंदर जेर निकल जाती है। यदि 8 घंटे से भी ज्यादा समय तक जेर नहीं निकलती है तो इसे जेर का रुकना कहते हैं।

कारण :

1. गर्भपात होने के कारण।
2. गर्भाशय का शिथिल पड़ जाना।
3. गर्भाशय में एक से अधिक बच्चे का होना।
4. असामान्य प्रसव।
5. पशुओं में शारीरिक व्यायाम की कमी।
6. पौषक तत्वों की कमी।

उपचार :

- जेर के गर्भाशय में रह जाने से पशुओं में कई तरह की व्याधियां हो जाती हैं अतः बच्चा पैदा होने के 8 घंटे बाद भी यदि जेर नहीं निकले तो पशु चिकित्सक से उसे निकलवाना चाहिए। लाल दवा के हल्के घोल से गर्भाशय की सफाई करनी चाहिए।
- जेर निकलवाने के बाद गर्भाशय में रोग प्रतिरोधक गोली या घोल के रूप में 2-3 दिन तक अवश्य डलवानी चाहिए।
- जेर के शेष भाग को निकालने व गर्भाशय की सफाई हेतु पशु को गुड़ के साथ गर्भाशय की टॉन बढ़ाने वाली दवा सुबह-शाम एक हफ्ते तक खिलानी चाहिए।

गर्भित पशुओं की देखभाल

पशुपालन व्यवसाय से पशु की आय का मुख्य स्रोत पशुओं द्वारा उत्पादित दूध एवं बछड़े-बछड़ियों से होता है। अतः पशुपालकों का कर्त्तव्य है कि ग्याभन गायों को उनके स्वयं के निर्वाह के साथ-साथ उनके पेट में पल रहे बच्चे के दायित्व को समझकर उनके पालन की उचित एवं अनुकूल पद्धति अपनाएं जिससे पशुओं को निरोग बनाकर यथेष्ट लाभ प्राप्त कर सकें।

गर्भित पशु को पर्याप्त मात्रा में हरा चारा, दाना एवं खनिज लवण युक्त संतुलित पौष्टिक आहार उपलब्ध करावें।

- गर्भकाल के अंतिम दो माह में जीवन निर्वाह हेतु दी गई खुराक के साथ-साथ 1 से 1.5 कि.ग्रा अतिरिक्त दाना देना चाहिए जो कि ब्याने के कुछ दिन पूर्व 2 से 2.5 कि.ग्रा. तक बढ़ाया जा सकता है।
- गर्भित पशु को उचित व्यायाम मिलना चाहिए।
- समय समय पर पशु चिकित्सक द्वारा गर्भित पशु की स्वास्थ्य एवं गर्भ की जांच करवाते रहना चाहिए।
- गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में गर्भवती गाय/भैंस को अन्य पशुओं से अलग साफ, सूखे बिछावन युक्त हवादार आवास में बांधें और समय-समय पर गर्भवती पशु की देखभाल करें।
- ब्याने से पहले गाय को दलिया और गुड़ खाने को दें।
- ब्याने की पीड़ा लम्बे समय तक चले और मुतास आने के 3-4 घंटे बाद भी बच्चा ना आवे तो तुरंत पशु चिकित्सक की मदद से प्रसव करावें।
- ब्याने के बाद गाय/भैंस को गुड़, अजवाईन या मैथी का मिश्रण दें एवं जेर गिरने का इन्तजार करें।
- आठ घंटे पूरे हो जाने के बाद भी यदि जेर नहीं गिरे तो पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें और पशु के नवजात बछड़े-बछड़ी का समूचित ध्यान रखें।

ब्यांने के समय रखी जाने वाली सावधानियां

गर्भित पशु की देखभाल –

- पशु को गर्भित होने के पश्चात् अन्य पशुओं से पृथक रखना चाहिए।

- गर्भित पशु को पर्याप्त मात्रा में हरा चारा, बांट (दाना) व खनिज लवणों का मिश्रण प्रतिदिन खिलाना चाहिए।
- प्रतिदिन पर्याप्त मात्रा में पीने का पानी उपलब्ध कराना चाहिए।
- गर्भावस्था के दौरान भी पशुओं को खतरनाक व जानलेवा बीमारियों जैसे मुंहपका-खुरपका, गलघोंटू, फड़सूजन, फिड़किया आदि के बचाव हेतु समय-समय पर टीकाकरण करवाना चाहिए।
- गर्भित पशु को पेट के कीड़ों की दवा पशु चिकित्सक की सलाह पर पिलाना चाहिए, जिससे कीड़े नष्ट हो जायें तथा पौष्टिक आहार का पशु को लाभ मिल सके।
- समय-समय पर पशु चिकित्सक द्वारा गर्भित पशु के स्वास्थ्य एवं गर्भ की जांच करवाते रहना चाहिए।

प्रसव के समय ध्यान देने योग्य बातें –

- गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में पशु को प्रसव कक्ष में बिलकुल अलग रखना चाहिए ताकि ब्याते समय किसी प्रकार की असुविधा न हो।
- प्रसव कक्ष व आस-पास का स्थान बिल्कुल साफ-सुथरा एवं सूखा होना चाहिए।
- फर्श पर घास-फूंस आदि बिछा देना चाहिए ताकि पशु को बैठने में आराम रहे तथा ब्याते समय नवजात को भी चोट न लगे।
- प्रसव के समय यदि पशु को सहायता की आवश्यकता हो तो पशु चिकित्सक की मदद लेनी चाहिए।
- पशु द्वारा जेर गिराने पर जेर को गहरा गड्ढा खोदकर दबा देना चाहिए।

नवजात बछड़े की देखभाल –

- जन्म लेते ही नवजात बछड़े के नाक व मुंह से श्लेष्मा हटानी चाहिए ताकि वह आराम से सांस ले सके।
- साफ-सुथरे कपड़े से नवजात के शरीर को पोंछकर सुखाना चाहिए।
- निजर्मीकृत ब्लेड अथवा चाकू से नवजात बछड़े की नाल काटकर उसे साफ धागे से बांध देना चाहिए तथा उस पर टिंचर आयोडीन लगाना चाहिए जिससे नाल पकने का भय नहीं रहता हैं
- नवजात को भरपेट मां का प्रथम दूध (कोलोस्ट्रम) पिलाना चाहिए, क्योंकि इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले अवयव होते हैं। ये अवयव नवजात शिशु को विभिन्न रोगों के संक्रमण से बचाते हैं।
- नवजात को साफ एवं सूखे स्थान पर रखना चाहिए।

स्वच्छ दुग्ध उत्पादन में सावधानियां

- स्वच्छ दुग्ध उत्पादन हेतु पशु बाड़ा, पशु शरीर, दूधिया तथा दूध वाले बर्तन बिल्कुल साफ होने चाहिए।
- लाल दवा के हल्के घोल से पशु की गादी व थन तथा दूधिये के हाथ भली प्रकार साफ कर दूध निकालना चाहिए। दूध निकाल कर लाल दवा से धोने से गादी में थनैला रोग नहीं होता है।
- पशु के सामान्य स्रावों- लार, नाक, मल, मूत्र द्वारा दूध को बचाकर भंडारण करना चाहिए।

दुग्ध दोहन का सही तरीका, गलत–दोहन से होने वाली हानियां

- पशुओं को दुहते समय पूरे हाथ से थन को दबाकर दूध निकालना चाहिए। इस प्रकार दुहने से पशु को दर्द नहीं होता है तथा दूध भी आराम से निकलता हैं।
- अंगूठा मोड़कर थन को मुट्ठी में भींचकर दूध दूहने से पशु को तकलीफ होती है तथा दबाव के कारण थन में गांठ हो सकती है, साथ ही थनैला रोग की संभावना अधिक रहती हैं।
- यदि पशु के थन छोटे हो तथा पूरे हाथ में न आते हो तो खुले अंगूठे व अंगुलियों द्वारा थन को दबाकर दूध दुहना चाहिए।

दूध दोहन की सही विधियां

दूध दोहन की गलत विधि

मादा पशुओं में परिपक्व होने की आयु, ऋतुचक्र एवं प्रजनन से सम्बन्धित जानकारी

	गाय	भैंस	घोड़ी	बकरी	भेड़	शूकर	ऊंट
परिपक्व होने की आयु (प्रजनन योग्य आयु)	24–36 माह	24–36 माह	12–24 माह	18–21 माह	8–12 माह	4–6 माह	3–4 वर्ष
ऋतु चक्र की अवधि	18–24 दिन	21 दिन	12–21 दिन	18–21 दिन	15–19 दिन	21–28 दिन	मौसमी ऋतुचक्र
ताव में रखने की अवधि	8–28 घंटे औसतन 22 घं.	10–36 घंटे औसतन 24 घं.	2–6 दिन	24–36 घंटे	36 घंटे	2–3 दिन	नवम्बर से मार्च तक
गर्भाधान का उपयुक्त समय	ताव में आने के 12 घंटे बाद	ताव में आने के 16–24 घंटे	ताव में आने के 4–5 दिन के मध्य	ताव में आने के 20–24 घंटे के मध्य	ताव में आने के 20–24 घंटे के मध्य	ताव में आने के 35 घंटे बाद के मध्य	नवम्बर से मार्च तक
गर्भधारण की अवधि	280 दिन	300 दिन	336 दिन	150 दिन	150 दिन	114 दिन	385 से 395 दिन
प्रसव के बाद पुनः ताव में आना	30–36 दिन	30–60 दिन	21–30 दिन	21 दिन	21 दिन	60 दिन	–
शरीर का सामान्य तापक्रम डिग्री फारेनहाइट	101–102	101–102	100–1001	103–104	103–104	102–103	95 से 97
पशु की औसत आयु	20 वर्ष	20 वर्ष	20 वर्ष	15 वर्ष	12 वर्ष		

पशु स्वास्थ्य संरक्षण

रोगी पशु के सामान्य लक्षण :

- पशु चारे-पानी में रुचि नहीं लेता है।
- पशु सुस्त व कमजोर हो जाता है तथा उसकी आदतों व व्यवहार में परिवर्तन होता है।
- थूथन गीले की जगह सूख जाता है।
- गोबर व लीद पतली, बदबूदार व आंव वाली हो जाती है।
- पशु की त्वचा ढीली व सूखी हो जाती है। बाल झड़ने लगते हैं।
- पशु के उत्पादन में अचानक कमी हो जाती है।
- रोगी पशु में कई बार शारीरिक कंपन, हांफना, मुंह से लार गिरना, दांत किटकिटाना आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

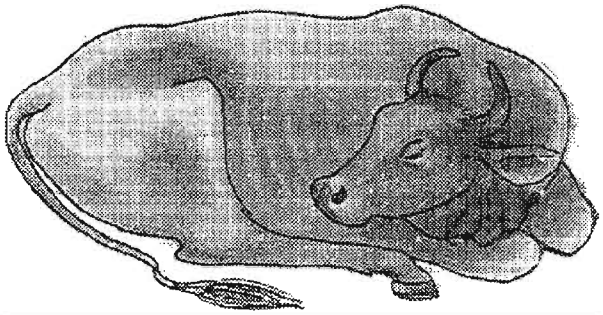

संक्रामक रोग से मृत पशु के शवों का निस्तारण

क्या करें !

- संक्रामक रोग से मृत पशु के शव को गड्ढा खोदकर दबा देना चाहिए।
- गड्ढा लगभग 1.5 मीटर गहरा खोदकर शव पर नमक चा चूने की परत बिछा दें।
- मृत पशु का मल-मूत्र, चारा बिछावन या खून जैसे विसर्जित पदार्थों को गड्ढे में दबा दें या जला दें।
- पशु आवास में शव स्थान पर चूना, पानी, फिनायल का छिड़काव करें या कागज चारा डालकर आग लगाकर स्थान को शुद्ध करें।

क्या न करें !!

- खुले मैदान, नदी या तालाब में नहीं फेंके।
- शव की खाल न उतारें।
- चील, कोओं व कुत्तों के लिए खुला ना छोड़े जो कि इस संक्रमण को एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलाते हैं।
- बिना स्थान शुद्ध किए स्वस्थ पशु को उस स्थान पर ना बांधे।

पशुओं में होने वाले प्रमुख संक्रामक रोग

बीमारी का नाम	रोग से ग्रसित होन वाले पशुधन	रोग उत्पत्ति के कारण	रोग के प्रमुख लक्षण	बचाव हेतु टीके लगवाने का उचित समय
एच.एस. गलघोंटू घुर्रका	गाय, भैंस, भेड़ व बकरी	पाश्चूरेला मल्टोसिडा नामक जीवाणु	- तेज बुखार (105^0 F -107^0F) - आंखे लाल व सूजी - नाक व मुंह से पानी गिरना - गले के नीचे दर्दकारी सूजन - सांस लेने में कठिनाई, दम घुटने से घर्र-घर्र आवाज आना। - दम घुटने से मृत्यु।	मानसून पूर्व
बी.क्यू (लंगड़ा बुखार)	गाय, भैंस, भेड़ व बकरी (कम उम्र के स्वस्थ पशुओं में संभावना अधिक)	क्लोस्ट्रीडियम-चौवाई नामक जीवाणु	- तेज बुखार - आंख लाल - पूट्ठे पर गर्म सूजन जो बाद में ठंडी हो जाती है। - सूजन को दबाने पर चट-चट की आवाज आती है। - लंगड़ापन	मानसून पूर्व
एन्थ्रेक्स	गाय, भैंस, भेड़ व बकरी	बैसिलस एन्थ्रेसिस नामक जीवाणु	- अचानक बीमार होना - तेज बुखार एवं बैचेनी से अचानक मृत्यु। - खूनी दस्त। - पशु के प्राकृतिक छिद्र जैसे मुंह, नाक एवं मल द्वार से गहरे लाल रंग का गाढ़ा खून निकलना।	रोगग्रस्त क्षेत्रों में ही लगातार तीन वर्ष तक (वर्ष में एक बार) टीकाकरण कराएं।
एफ.एम.डी. (खुरपका-मुंहपका)	गाय, भैंस, बकरी, भेड़ व ऊंट	विषाणु जनित	- तेज बुखार, खाना छोड़ना। - मुंह से लम्बी लार गिरना। - मुंह तथा जीभ में छाले। - खुरों के बीच में जख्म व मवाद पड़ना। - पैरों से लंगड़ाना।	नवम्बर-दिसम्बर जून-जुलाई
आर.पी. (पशुमाता रोग)	गाय, भैंस, भेड़ व बकरी	विषाणु जनित	- तेज बुखार। - जीभ, होठ पर लाल पीले छाले। - मुंह तथा नाक से स्राव आना। - दूसरे दिन से तेज पतले धारदार एवं बदबूदार दस्त तथा बाद में खुनी दस्त।	

संक्रामक रोग प्रकोप होने पर बचाव के उपाय

- संक्रामक रोग के प्रारम्भिक लक्षण दिखते ही रोगी पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग स्थान पर रखें।
- रोगी पशु को दाना-चारा व पानी की व्यवस्था अलग बरतनों में करें।
- रोगी पशु के उपचार हेतु पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।
- पशु चिकित्सक द्वारा संक्रामक रोग होने की जानकारी देने पर, रोगी पशु के उपचार के साथ-साथ पशु चिकित्सक की सलाह से आसपास के स्वस्थ पशुओं में टीकाकरण करायें।
- रोग ग्रस्त क्षेत्र में पशुओं का आवागमन/परिवहन नहीं करें।
- पशुपालक सर्वप्रथम स्वस्थ पशु का दूध निकाले तत्पश्चात् रोगी पशु का दूध निकाले एवं हाथ, बर्तन आदि को एन्टीसेप्टीक घोल जैसे लाल दवा, डिटोल आदि से साफ करें।
- संक्रामक रोग से मृत पशु को गांव के बाहर लगभग 1.5 मीटर गहरे गड्ढे में चूने या नमक के साथ दबा देवें।
- मृत पशु के सम्पर्क में रही वस्तुओं व स्थान को भी फिनाइल, लाल दवा आदि से कीटाणु रहित करें।

पशुओं के परजीवी रोग व बचाव

परजीवी ऐसे जीव होते हैं जो दूसरे जीव के आधार पर अपना जीवन जीते हैं। पशुओं में मुख्यतः तीन प्रकार के परजीवी होते हैं -

- बाह्य परजीवी
- अन्तः परजीवी
- रक्त परजीवी

बाह्य परजीवी

ये परजीवी पशु के शरीर के बाहर त्वचा व बालों के बीच में छुपे रहते हैं। मच्छर, मक्खी, जूं-चिचड़े, पिस्सू इत्यादि बाह्य परजीवी इस श्रेणी में आते हैं। ये परजीवी एक तरफ दूध को प्रदूषित करते हैं वहीं कई प्रकार के रोगकारक जीवाणुओं को फैलाते हैं। त्वचा पर संक्रमण होने से पशु को खुजली, घाव, कीड़े पड़ना इत्यादि रोग हो जाते हैं। परिणामस्वरूप पशु कमजोर हो जाता है तथा उत्पादकता में भारी कमी आती है।

अन्तः परजीवी

फीताकृमि, गोलकृमि जैसे परजीवी पशु के शरीर में यकृत, आंत, फेफड़ों व अन्य पाचन अंगों में रहते हैं। ये परजीवी प्रदूषित चारे व पानी के साथ पशु के शरीर में प्रवेश कर पोषक तत्व प्राप्त करते हुए वृद्धि करते हैं। ये परजीवी पशु का खून व ऊतक चूसकर पशु को रोग ग्रसित कर देते हैं। ऐसे में पशु में बार-बार दस्त लगते हैं अथवा कब्ज होता है तथा पाचन तंत्र सम्बन्धी रोग होते हैं। अंततः पशु कमजोर होकर अपने दुग्ध, मांस, प्रजनन व कार्य की क्षमता कम कर देता है।

रक्त परजीवी

बबेसिया, ट्रिपेनोसोमा, थाइलेरिया जैसे परजीवी पशु के रक्त में रहते हैं। ये रक्त में अपना जीवन चक्र पूर्ण करते हैं। पशु

को रोग ग्रस्त कर देते हैं। इनसे पेशाब में खून, चक्कर आना, खून की कमी, तेज बुखार व मृत्यु जैसे लक्षण दिखाई देते हैं। ये रक्त परजीवी एक पशु से दूसरे पशु में रक्त चूषक बाह्य परजीवियों जूं, चीचड़े आदि द्वारा फैलाए जाते हैं।

परजीवी रोगों से बचाव व रोकथाम :

- पशु आवास व पशु की स्वच्छता का ध्यान रखें। पानी व गोबर इकट्ठा ना होने दें।
- पशु आवास की दीवारों व फर्श में कहीं छोटी-छोटी दरारें ना हों।
- पशु के बाल समय-समय पर काटते रहें।
- पशुओं को नियमित रूप से कीटनाशक घोल या पाऊडर (डी.डी.टी., बी.एच.सी., मैलेथियॉन आदि) को शरीर पर पशु चिकित्सक की सलाह से लगाना चाहिए। साथ ही पशु आवास में इन कीटनाशक घोलों से छिड़काव भी करवाना चाहिए।
- बाह्य परजीवियों को त्वचा से हटाकर तुरन्त मार देना चाहिए।
- पशु को वर्ष में तीन बार नियमित अंतराल पर कृमिनाशक औषधियां पशु चिकित्सक की सलाह पर देवें।
- पशु के मूत्र में खून, चक्कर आना, शरीर का धनुषाकार होना इत्यादि लक्षण आते ही पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार कराएं।

पशुओं को थनैला रोग से बचाएं

थनैला रोग दुधारू पशुओं में होने वाला जीवाणु जनित रोग है। यह रोग सामान्यतया अधिक दूध देने वाले पशुओं में होने के कारण कृषक को आर्थिक रूप से भारी क्षति पहुंचाता है। पशु दूध देने की क्षमता खो देता है, जिससे उसका बाजार मूल्य कम हो जाता है।

दूध दोहने से पूर्व हाथ धोना

गादी व थन को साबुन व पानी से धोना

दूध निकालने के पश्चात् लाल दवा से धोना

कारण :

- थनों में विषाणु, जीवाणु व माइकोप्लाज्मा का संक्रमण थनैला रोग उत्पन्न करता है। यह संक्रमण आवास में गोबर, मूत्र, कीचड़ की गंदगी, चोट व घाव, गलत ढंग से दूध दोहना तथा कभी-कभी पशुपालक के अस्वच्छ कपड़ों से हो सकता है।

रोग लक्षण :

- एक या अधिक थनों व अयन में सूजन या गांठ होना।
- दूध में छिछड़े या खून का आना।
- पशु का खाना-पीना कम होना, सुस्त हो जाना। दुग्ध उत्पादन में कमी इत्यादि लक्षण मिलते हैं।

थनैला रोग से बचाव के उपाय :

- पशुशाला, पशु व पशुपालक के वस्त्र हमेशा स्वच्छ रखें। गोबर, मूत्र व बिछावन की प्रतिदिन सफाई करें।
- दूध उपयुक्त विधि से निकालें। निश्चित समय पर अधिक समय तक दूध थनों में नहीं छोड़ें।
- दूध दूहने से पूर्व व पश्चात् थनों को हल्के लाल दवा के घोल से धोवें।
- रोग लक्षण देखकर तुरन्त पशु चिकित्सक की सलाह से उपचार कराएं। देरी होने पर थनों के बेकार होने की संभावना रहती है।
- थनों में बछड़े द्वारा किए घाव अथवा चोट का उपचार तुरंत करवाएं ताकि उसमें संक्रमण ना हो।

पशुओं में होने वाले प्रमुख संक्रामक रोग

रोग का नाम	रोग का कारण	रोग के लक्षण	प्राथमिक उपचार
1. अपच (बदहजमी)	– सड़ा गला अथवा सूखा चारा अधिक खाना। – अत्यधिक अन्न व बांटा खाना। पेट में कीड़े होना। – अचानक चारा बदलना।	– भूख बंद हो जाती है। – उदास रहना व जुगाली बंद होना। – कब्ज अथवा दस्त होना। – कमजोरी व उत्पादन में कमी।	– सौंठ व अजवाइन व मीठा सोडा पानी में मिलाकर देना। – कब्ज होने पर अरण्डी का तेल देवें। – 20 ग्राम सौंठ अथवा छोटी पीपल पीसकर देना चाहिए।
2. कब्ज होना	– भारी सूखा चारा खाना। – चारे की कमी। – तेज गर्मी, खाने के साथ पानी की कमी।	– जुगाली बंद तथा चारा नहीं खाना। – गोबर बंद करना तथा पेट दर्द रहना। – पशु का दांत पीसना व बैचनी।	– मैगसल्क 20 ग्राम व नमक 200 ग्राम व मीठा सोडा 30 ग्राम व आधा पाव सौंठ गुनगुने पानी से दें। – तेल देवें।
3. आफरा	– सड़ा गला दाना खाना। – गुदेदार हरे चारे की अधिक मात्रा खाना। चारे व दाने में अचानक बदलाव।	– पेट का बाईं तरफ से गैस के कारण फूलना। बजाने पर ढोल जैसी आवाज। – बैचेनी व पेट दर्द होना। – सांस लेने में कठिनाई। – तुरन्त इलाज न कराने	– मीठा या सरसों का तेल 250 ग्राम, तारपीन का तेल 60 ग्राम मिलाकर पिलाएं अथवा 30 ग्राम सौंठ, 5 ग्राम हींग, 100 ग्राम नमक, 3 ग्राम

रोग का नाम	रोग का कारण	रोग के लक्षण	प्राथमिक उपचार
		पर मृत्यु।	काली मिर्च पीसकर पिलाना।
4. दस्त लगना	– आंतों में जीवाणु विषाणु या परजीवी संक्रमण। – अचानक चारे का बदलाव। – सड़े व पुराने खाद्य पदार्थ। – अत्यधिक हरा चारा खाना।	– पतला व बदबूदार गोबर। – दस्त बार–बार होने के के कारण शरीर में पानी व खनिज लवण की कमी हो जाती है। – कभी–कभी खूनी दस्त।	– पेट के कीड़ों की दवा दें। – कैओलिन पैक्टिन जैसे पाऊडर, छाछ व चावल मांड के साथ दें।

नोट : पाचन तंत्र से सम्बन्धित रोग होने पर पशु पालक द्वारा प्राथमिक उपचार करने एवं एक या दो खुराक देने पर यदि लाभ नहीं मिले तो तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।

विशेष ध्यान दें : पशु द्वारा अनाज या आटा जैसा आहार खाने पर यदि आफरा आता है तो पशु को तुरन्त मीठा सोडा देना लाभकारी रहता है। छोटे पशुओं में यह समस्या विकट रूप से सामने आती है। आराम न मिलने पर तुरन्त पशु चिकित्सालय में सम्पर्क करें।

दुग्ध ज्वर (मिल्क फीवर) :

ब्याने के पूर्व एवं पश्चात् मिल्क फीवर एक मैटाबोलिक बीमारी है जिसमें पश्चात् पशु के शरीर का तापक्रम बढ़ने की बजाय कम हो जाता है, मांसपेशियों में कमजोरी श्वांस लेने में कठिनाई आ जाती है जिससे पशु अपना होश खो देता है। यदि समय पर इलाज नहीं हो तो पशु की मृत्यु तक हो सकती है।

कारण :

1. रोग ग्रसित पशुओं में कैल्शियम की मात्रा सामान्य से घटकर 3–7 मिग्रा प्रति 1000 सीसी रह जाती है।
2. यह रोग मुख्यतः ज्यादा दूध देने वाले पशुओं में होता है।
3. पशु की ब्यांत व उम्र बढ़ने से इस रोग के आसार बढ़ जाते हैं।
4. भैसें, गायों की अपेक्षा इस रोग से अधिक ग्रसित होती हैं।

लक्षण :

- पशु सुस्त हो जाता है, गोबर बंद हो जाता है।
- वह अपनी गर्दन को पेट की तरफ घुमाकर बैठ जाता है।
- मांसपेशियां ढीली पड़ जाती हैं तथा पशु खड़ा होने में असमर्थ हो जाता है।

- नथुना सूख जाता है एवं गुदा का तापमान घटकर 97° से 100 °F तक रह जाता है।
- अंतिम अवस्था में पशु लगभग बेहोश हो जाता है तथा एक तरफ लेटकर चारों टांगे शरीर से दूर कर लेता है।

बचाव :

1. दुधारू पशुओं को कैल्शियम व फास्फोरस युक्त आहार खिलावें।
2. ब्याने के 10–15 दिन तक पशु का सम्पूर्ण दूध नहीं दुहना चाहिए। दूध की कुछ मात्रा गादी में बनी रहनी चाहिए।

मिल्क फीवर का उपचार

उपचार हेतु पशु चिकित्सक की सलाह लें।

1. रोग ग्रस्त जानवर यदि लेटी अवस्था में हो तो उसे बैठाना चाहिए, रोगी पशु को कुछ नहीं पिलाएं।
2. कैल्शियम की बोतल को नाड़ी में लगाने से पहले शारीरिक तापमान तक गर्म करना चाहिए।
3. कैल्शियम बोरोग्लूकोनेट इंजेक्शन 200–400 मिली. आधा चमड़ी के नीचे तथा आधा नाड़ी में लगाएं।
4. भारी पशु को कैल्शियम की खुराक ज्यादा देवें।
5. अगर साथ में ड्रेंचिंग न्यूमोनिया हो तो सल्फाडिमीडिन का इंजेक्शन तीन दिन तक देना चाहिए।

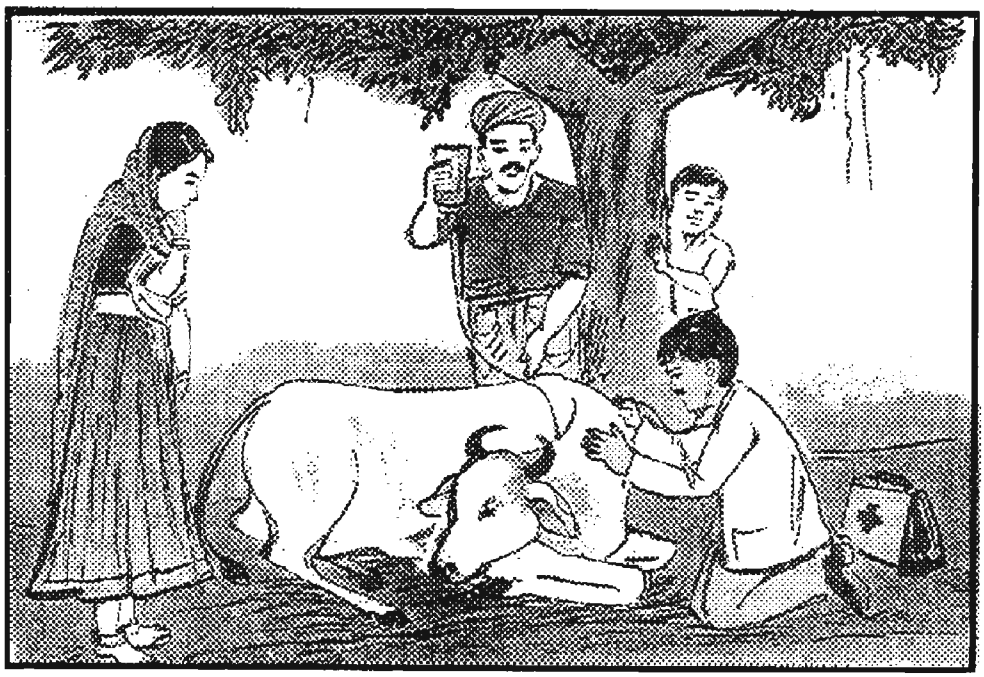

पशुओं में घावों का उपचार

- पशुओं के चोट लगने पर ऐन्टीसेप्टीक दवा जैसे डिटोल, स्प्रिट, लाल दवा या फिटकरी के घोल से साफ करें।
- घाव साफ करने के बाद घाव पर टिंचर आयोडिन या पोवीडीन आयोडिन दवा लगायें।
- घाव पर पट्टी बांधे ताकि मक्खियां, धूल मिट्टी आदि द्वारा संक्रमण न हो।
- यदि घाव ज्यादा गहरा हो अथवा खून का बहना बन्द नहीं हो तो तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें।

घाव में कीड़े पड़ने पर उपचार :

- बरसात में खुले घाव पर मक्खियों के बैठने व अण्डे देने से घाव में कीड़े पड़ जाते हैं, जो कि मक्खी के लारवा होते हैं व घाव को ठीक नहीं होने देते हैं।
- घाव में कीड़े दिखने पर फिनाइल या तारपीन के तेल को घाव पर लगायें तथा चिमटी से कीड़े निकाल दें।
- कुछ समय बाद घाव की सफाई ऐन्टीसेप्टीक घोल से भिगी रुई से करें।
- तत्पश्चात् उक्त घाव में एक भाग फिनाइल व चार भाग सरसों के तेल को मिला कर घोल बनाकर प्रतिदिन लगायें।

शल्य चिकित्सा द्वारा ठीक किए जाने वाली प्रमुख व्याधियां
(MEDICAL PATELAR DESMOTOMY)

चिटकी रोग : इसकों ''मीडियल पटेलर लक्सेसन' भी कहते हैं। इस रोग में पशु आराम करने के बाद चलता है, तो उसका पिछला एक या दोनों पैर कुछ दूर तक या तो झटके खाता हुआ चलते हैं या पशु पैर को घिसटता हुआ चलता है। कुछ कदम चलने के बाद तेज झटके के साथ पैर सामान्य हो जाता है।

कारण : पिछले पैर के टखना जोड़ में पटेला नामक हड्डी एक जगह पर अटक जाती है इस कारण पैर में झटका आता है।

उपचार : इसके उपचार के लिए बिना रक्त व अधिक शल्य क्रिया के कुछ ही मिनिट में एक तंतु (मीडियल पटेलर लिगामेंट) को काट दिया जाता है। इसके बाद पशु ठीक हो जाता है।

सावधानी : इसकी शल्यक्रिया किसी कुशल पशु चिकित्सक से ही करवानी चाहिए।

सींग का कैंसर (HORN CANCER) : इस जानलेवा रोग में एक या दोनों सींगों में अप्रत्याशित तेजी से वृद्धि होने लगती है। ये सींग मुड़कर बढ़ने लगते हैं। सींग की जड़े मोटी व नरम हो जाती है। अतः सींग सड़ने लगते हैं और संक्रमण मस्तिष्क तक पहुंचने की संभावना हो जाती है।

उपचार : रोग प्रारम्भ होते ही पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए। इसमें साधारण शल्य क्रिया द्वारा रोग ग्रस्त सींग को जड़ से निकाल दिया जाता है। कुछ दिनों में मरहम पट्टी एवं औषधियां देने के बाद घाव ठीक हो जाता है।

पूंछ का सूखना या सड़ना (GANGRENE) : गाय, भैंस, ऊंट, बैल एवं कुत्ते में रोग ग्रसित पूंछ अपने अंतिम छोर से या तो सूखने लगती है या सड़ने लगती है। यह रोग उपचार के अभाव में ऊपर की ओर बढ़ने लगता है तथा रीढ़ की हड्डी तक पहुंचकर जान लेवा बन जाता है।

उपचार : इसके उपचार के लिए पशु की पूंछ को सुन्न कर रोग ग्रसित भाग को काटकर अलग कर दिया जाता है। इससे इस रोग का बढ़ना रुक जाता है। कुछ दिनों में औषधियां व पट्टी करने से घाव ठीक हो जाता है।

हड्डी का टूटना (फ्रेक्चर) : सामान्यतः बड़े पशुओं में हड्डी टूटने का उपचार कम ही सफल होता है क्योंकि इलाज के पश्चात् पशु अपेक्षानुसार इस हेतु सहायता नहीं कर पाता है। फिर भी अगले व पिछले पैर की निचली लम्बी हड्डी अगर टूट जाये तो उसका उपचार डाक्टरी सहायता से संभव है।

टूटी हड्डी त्वचा व मांस के अगर बाहर नहीं आती है तो इलाज की सफलता बढ़ जाती है। उपचार में निम्न प्रयास किए जा सकते हैं –

1. पशुओं में जिस पैर की हड्डी टूटी हुई है, उसकी स्थिति को देखते हुए कच्चा पट्टा बांस खप्चियों के सहारे बांधा जाता है।
2. यदि हड्डी पूर्णतया टूटी हुई हो तो पक्का प्लास्टर (प्लास्टर ऑफ पेरिस) बांस व खप्चियों के सहारे बांधा जाता है।
3. हड्डी टूटने के स्थान पर यदि घाव है तो पहले घाव को साफ कर मरहम पट्टी व रोग प्रतिरोधक दवाएं दी जाती है।

रूमेनोटोमी

पशुओं द्वारा चारे के साथ-साथ लोहे या चमड़े या पॉलीथीन निर्मित वस्तुएं खा लेने पर 'ट्रोमेटिक रेटिकुलाइटिस' नामक रोग हो जाता है। इस रोग के इलाज के रूप में 'रूमेनोटोमी' नामक ऑपरेशन किया जाता है।

चूंकि उपयुक्त वस्तुऐं जैसे कि लोहे की कील, पिन, बोल्ट या चमड़े एवं पॉलीथीन की बनी वस्तुऐं जब किसी भी जुगाली करने वाले पशु द्वारा खा ली जाती है तो ये वस्तुएं चूंकि अपचनीय होती हैं, अतः पशुओं के आमाशय के एक भाग रेटीकुलम में हमेशा के लिए एकत्रित पड़ी रहती है। कुछ समय पश्चात् ये वस्तुएं शरीर के लिए घातक सिद्ध हो सकती हैं क्योंकि ये नुकीली वस्तुऐं पशुओं के आन्तरिक नाजुक अंगों को लगातार क्षति पहुंचाती है। अतः पशु की जिन्दगी बचाने के लिए इन वस्तुओं को बाहर निकालना जरूरी है जो कि रूमेनोटोमी नामक आपरेशन द्वारा संभव है।

उपरोक्त ऑपरेशन एक कुशल पशु चिकित्सक द्वारा किया जाता है। पशु के बांई ओर स्थित कोल (पेरावर्टीबल फोसा) के कुछ हिस्से को इंजेक्शन द्वारा निश्चेचित (सुन्ना) करके उक्त ऑपरेशन कर चारे की थैली रूमन से होते हुए रेटिकुलम में स्थित विभिन्न प्रकार की अपाचनीय वस्तुओं को निकाला जाता है। ऑपरेशन के बाद 8 दिन तक पशु की उचित देखभाल जरुरी होती है। उपरोक्त ऑपरेशन लगभग सफल ही पाया गया है।

डिस्टोकिया (असामान्य प्रसव)

कई बार किसी कारणवश साधारण प्रसव में कोई रुकावट पड़ जाने से मादा अपने स्वयं के प्रयत्न के द्वारा जनने में असमर्थ हो जाती है एवं उसे बाहरी सहायता की आवश्यकता होती है, तो इसे असामान्य प्रसव (डिस्टोकिया) कहते है।

उपरोक्त स्थिति में यदि बाहरी सहायता उपलब्ध करवाने पर भी प्रसव नहीं हो पाए तो शल्य क्रिया (जिसे सीजेरियन

कहा जाता है) कर उस मादा पशु की जान बचाई जा सकती है। परन्तु यह शल्य क्रिया केवल कुशल व शल्य पशु चिकित्सक से ही करवाना चाहिए।

उपरोक्त शल्य क्रिया पशु को बेहोश करके की जाती है। हालांकि इस शल्य क्रिया के पश्चात् पशु की देखरेख काफी हद तक आवश्यक होती है परन्तु थोड़ी मेहनत करके अपने मूल्यवान पशु की रक्षा की जा सकती है।

ऐसा देखा गया कि ग्रामीण पशुपालक प्रसव पीड़ा से ग्रसित मादा को पहले स्वयं ठीक करने का प्रयत्न करते हैं और निष्फल होने पर पशु चिकित्सक की शरण लेते हैं। ऐसे में गर्भाशय में डाले गए गंदे हाथों से खींचतान करने पर उनका जननेन्द्रिय मार्ग सूखकर सूज जाता है एवं पशु चिकित्सक को शल्य चिकित्सा में सफलता मिलने के अवसर कम हो जाते हैं। अतः ऐसी स्थिति उत्पन्न हीं होने देनी चाहिए एवं प्रसव पीड़ा प्रारम्भ होते ही सीधे पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिए।

नोट : प्रायः ऐसा देखा गया है कि कुछ ग्रामीण पशुपालक पशु द्वारा लोहा या लोहे की अन्य वस्तुएं खा लेने के उपरान्त पशु के शरीर के बाहर से भारी भरकम चुम्बक आदि घुमाकर इलाज करने की कोशिश करते हैं। ऐसा करने पर पशु को लाभ होने की बजाय नुकसान होने की आशंका अधिक रहती है।